फरवरी-२०२२ ◆ वर्ष १० ◆ अंक १० ◆ उदयपुर

ओ३म्

सत्यार्थ सौरभ

मासिक

फरवरी-२०२२

सकल दिशाएँ मुस्काती हैं,
सकल जगत् आनन्द मग्न है।
प्रभु प्रताप से बनती ऋतुएँ,
यह वसन्त में मोहित मन है।
प्रभु कैसा है क्या करता है,
सत्यार्थ प्रकाश में ये वर्णन है।।

शारीरिक, आत्मिक और सामाजिक उन्नति को समर्पित

श्रीमद्दयानन्द सत्यार्थ प्रकाश न्यास
नवलखा महल परिसर, गुलाब बाग, महर्षि दयानन्द मार्ग,
उदयपुर–313001 (राज.)

₹१५ १२४

मसालों का शहंशाह

MDH

मसाले

सेहत के रखवाले असली मसाले सच - सच

पद्मभूषण
महाशय धर्मपाल जी
संस्थापक चेयरमैन, एम.डी.एच. (प्रा०) लि०

For More Information Visit us on :

mdhspicesofficial | mdhspicesofficial | mdhspicesofficial | SpicesMdh

www.mdhspices.com

SCAN FOR MDH ORIGINAL RECIPES

सत्यार्थ प्रकाश की शिक्षाओं को अपने आँचल में समेटे, सम्पूर्ण परिवार के लिए, हर आयु समूह के लिए, पठनीय और समर्पित

न्यास का मासिक मुखपत्र

सत्यार्थ सौरभ

प्रमुख संरक्षक - सत्यार्थ सौरभ

डॉ. सुखदेव चन्द सोनी (अमेरिका)

परामर्शदाता संपादक मण्डल

डॉ. महावीर मीमाँसक
आचार्य वेदप्रकाश श्रोत्रिय
डॉ. ज्वलंत कुमार शास्त्री
डॉ.सोमदेव शास्त्री
डॉ. रघुवीर वेदालंकार
आचार्य वेदप्रिय शास्त्री

सम्पादक

अशोक आर्य

प्रबन्ध सम्पादक

भवानी दास आर्य

प्रबन्ध सहयोग (ग्राफिक्स डिजाईनर)

नवनीत आर्य (मो.9314535379)

व्यवस्थापक

भँवर लाल गर्ग

सहयोग ◆	भारत	विदेश
संरक्षक	- 11000 रु.	$ 1250
आजीवन	- 1500 रु.	$ 300
पंचवर्षीय	- 600 रु.	$ 125
वार्षिक	- 150 रु.	$ 30
एक प्रति	- 15 रु.	$ 10

भुगतान राशि धनादेश/चैक/ड्राफ्ट श्रीमद् दयानन्द सत्यार्थ प्रकाश न्यास के पक्ष में बना न्यास के पते पर भेजें। अथवा यूनियन बैंक ऑफ इण्डिया मेन ब्रांच दिल्ली गेट, उदयपुर
खाता संख्या : 310102010041518
IFSC CODE- UBIN 0531014
MICR CODE- 313026001
में जमा करा अवश्य सूचित करें।

सृष्टि संवत् १९६०८५३१२१
माघ शुक्ल सप्तमी
विक्रम संवत् २०७८
दयानन्दाब्द १९७

February - 2022

सत्यार्थ-सौरभ में प्रकाशित लेखों में व्यक्त विचार सम्बन्धित लेखक के हैं। सम्पादक अथवा प्रकाशक का उनसे सहमत होना आवश्यक नहीं है। किसी भी विवाद के प्रतिवाद हेतु न्यायक्षेत्र उदयपुर ही होगा। आपत्ति की अवधि प्रकाशन तिथि से एक माह के भीतर ही मानी जायेगी।

विज्ञापन शुल्क (प्रति अंक)

कवर 2 व 3 (भीतरी आवरण) रंगीन 5000 रु.

अन्दर पृष्ठ (श्वेत-श्याम)

पूरा पृष्ठ (श्वेत-श्याम)	2000 रु.
आधा पृष्ठ (श्वेत-श्याम)	1000 रु.
चौथाई पृष्ठ (श्वेत-श्याम)	750 रु.

प्रकृति और जीव

समाचार २८	०४	वेद सुधा
	०७	सत्यार्थ मित्र बनें
	१५	विद्या और अविद्या
	१७	मध्यकालीन विद्वानों की कुछ .....
	१८	अमर है उस ऋषिवर का नाम
	१९	संयुक्त परिवार बरगद की छाँव
हलचल २९	२०	हमारी प्राणदायिनी धरती ......
	२२	ईश्वर जीवात्माओं को सुधार .....
	२५	स्वास्थ्य- गुड़ और घी है गुणकारी
	२६	बच्चों की संगति माता का निर्देश
	२७	सत्यार्थप्रकाश पहेली- १२/२१
	३०	सत्यार्थ पीयूष- वेद ज्ञान की .....

स्वामी — श्रीमद् दयानन्द सत्यार्थप्रकाश न्यास, नवलखा महल, गुलाब बाग, उदयपुर

वर्ष - १० | अंक - १०

मुद्रण — द्वारा - चौधरी ऑफसेट, (प्रा.लि.) ११-१२, गुरु रामदास कॉलोनी, उदयपुर

प्रकाशक

श्रीमद् दयानन्द सत्यार्थप्रकाश न्यास
सत्यार्थ प्रकाश भवन, नवलखा महल, गुलाबबाग, उदयपुर (राजस्थान) 313001
(0294) 4017298, 09314535379, 7976271159
www.satyarthprakashnyas.org, E-mail : satyarthsandesh@gmail.com

स्वत्वाधिकारी, श्रीमद् दयानन्द सत्यार्थप्रकाश न्यास, उदयपुर की ओर से प्रकाशक, मुद्रक अशोक कुमार आर्य द्वारा चौधरी ऑफसेट प्रा. लि., 11/12 गुरुरामदास कॉलोनी, उदयपुर से मुद्रित तथा कार्यालय श्रीमद् दयानन्द सत्यार्थप्रकाश न्यास, सत्यार्थ प्रकाश भवन, नवलखा महल, गुलाबबाग, महर्षि दयानन्द मार्ग, उदयपुर–313001 से प्रकाशित, सम्पादक–अशोक कुमार आर्य

ओ३म्

वेद सुधा

येन द्यौरुग्रा पृथिवी च दृढा येन स्व स्तभितं येन नाकः।
योऽअन्तरिक्षे रजसो विमानः कस्मै देवाय हविषा विधेम।। - यजुर्वेद ३२/६

अर्थ- **(येन)** जिस परमात्मा ने **(उग्रा)** तीक्ष्ण स्वभाववाले **(द्यौः)** सूर्य आदि **(च)** और **(पृथिवी)** भूमि को **(दृढा)** धारण **(येन)** जिस जगदीश्वर ने **(स्वः)** सुख को **(स्तभितम्)** धारण और **(येन)** जिस ईश्वर ने **(नाकः)** दुःखरहित मोक्ष को धारण किया है **(यः)** जो **(अन्तरिक्षे)** आकाश में **(रजसः)** सब लोक-लोकान्तरों को **(विमानः)** विशेष मानयुक्त अर्थात् जैसे आकाश में पक्षी उड़ते हैं, वैसे सब लोकों को निर्माण करता और भ्रमण कराता है, हम लोग उस **(कस्मै)** सुखदायक **(देवाय)** कामना करने योग्य परब्रह्म की प्राप्ति के लिए **(हविषा)** सब सामर्थ्य से **(विधेम)** विशेष भक्ति करें।

विज्ञान

सब वेदों अर्थात् ऋग्वेद, यजुर्वेद, सामवेद, अथर्ववेद का और संसार में जड़-चेतनात्मक जो भी वस्तु जात पदार्थ हैं उन सबसे ईश्वर के उत्कृष्ट होने से 'ईश्वर' ही मुख्य तात्पर्य है। **'तत्तु समन्वयात्'** (वेदान्तदर्शन १/१/४) अर्थात् वह ब्रह्म सर्वत्र वेदवाक्यों में समन्वित अर्थात् प्रतिपादित है। कहीं-कहीं साक्षात्रूप और कहीं-कहीं परम्परा से। इस कारण वह ब्रह्म ही वेदों का परम अर्थ है।

सर्वे वेदा यत्पदमामनन्ति तपाꣳसि सर्वाणि च यद्वदन्ति। यदिच्छन्तो ब्रह्मचर्यं चरन्ति तत्ते पदꣳ संग्रहेण ब्रवीम्योमित्येतत्।।

(कठोपनिषद् २/१५)

जो पद जिसका मोक्ष नाम है, जो सब उत्तम उपायों से मनुष्यों के द्वारा प्राप्ति होने के योग्य है, यह ब्रह्म प्राप्ति का लक्षण है। सर्वानन्दमय, सब दुःखों से इतर=रहित है, जिसका **'ओ३म्'** नाम है, सब वेद सब ओर से मुख्यतया उसी का अभ्यास=प्रतिपादन कर रहे हैं; क्योंकि उसकी प्राप्ति के आगे किसी पदार्थ की प्राप्ति उत्तम नहीं है। जगत् का वर्णन, दृष्टान्त और संसार का उपयोग आदि का करना सब ब्रह्मप्राप्ति का ही वर्णन कर रहे हैं। **सत्यधर्म के अनुष्ठान जिनको तप कहते हैं, वे और सब ब्रह्मचर्यादि आश्रम के सत्याचरणरूप कर्म उसी ब्रह्म की प्राप्ति कराने के लिए ही हैं। इसीलिए ब्रह्म की प्राप्ति की इच्छा करके विद्वान् लोग प्रयत्न और उसी का उपदेश करते हैं।** जगत् के सभी रचे पदार्थ उसी ब्रह्मरूपी अर्थ की ओर संकेत करते हुए अपने को गौण और ब्रह्म को प्रमुखतया आराध्य बता रहे हैं। इसी प्रकार के भावगर्भित इस प्रकृत मंत्र पर विचार करते हैं।

"जिस परमात्मा ने तीक्ष्ण स्वभाव वाले सूर्यादि और भूमि को धारण किया।"

इस प्रत्यक्ष और अप्रत्यक्ष चराचर जगत् में व्याप्त परमेश्वर ने वैविध्य भरा तीन प्रकार से यह जगत् रचकर धारण किया। **प्रथम-** प्रकाशवाले सूर्य आदि, **दूसरा-** प्रकाशरहित पृथिव्यादि और **तीसरा-** वायु-विद्युत परमाणु आदि अदृश्य जगत्- उस सबको रचकर अन्तरिक्ष में स्थापित किया। उनमें से औषधि आदि पृथिवी में, प्रकाश आदि सूर्य आदि में और परमाणु आदि आकाश में और इस सब जगत् को प्राणों के शिर में स्थापित किया है। मन और पाँच ज्ञानेन्द्रियाँ और जीवादि उनके परस्पर संयोग तथा सूर्यादि को ईश्वर रचता और धारण करता है। यह सब प्रकाश वाले परमाणुओं की रचना है। दूसरा- प्रकाशहीन परमाणुओं से पाँच कर्मेन्द्रिय, दश प्राण और भारसहित गुरुत्वादि युक्त प्रकाशरहित पृथिव्यादि को रचा और तीसरा कारण जगत् परमाणु आदि अदृश्य जगत् अन्तरिक्ष में है हीं। इनमें सूर्य आदि उग्र तीक्ष्ण स्वभाववाले तेजस्क और पृथिवी आदि सौम्य हैं, इनको परमात्मा ने धारण किया हुआ है। **'दृढा'** का मौलिक अर्थ **'दृढीकृता'** अर्थात् **'दृढ़ किया'** है, फिर धारण किया, यह अर्थ कहाँ से और क्यों किया? परमाणु द्रव्यसमूह जो इन लोकों की रचना के आरम्भक द्रव्य थे, कल्पारम्भ में ईश्वर ने प्रयोग किए। वे सब अन्तरिक्ष=आकाश में घूम रहे थे, और उन घूमते हुए

द्रव्यसमूह से इन सूर्य और पृथिवी की रचना हुई। आकाश में यह सूर्य और पृथिवी भी बिना किसी निश्चित मार्ग और कक्षा के इधर-उधर घूम रहे थे। परमात्मा ने इन सब लोक-लोकान्तरों के मध्य सूर्य को आकर्षण और देखने आदि के प्रयोजनों के लिए 'दृढ़ किया' अर्थात् कक्षा निर्धारित की। सूर्य अपनी आकर्षण व्यवस्था से सब लोकों को अपने-अपने स्थान में रखता-धारण करता है। ऐसे तत्व तीन हैं जो आकर्षण गुणों के सहित सब लोकों के साथ वर्तते हैं- **(क)** परमात्मा **(ख)** वायु **(ग)** सूर्य लोक। इन सबमें परमात्मा का आकर्षण बल कार्य करता है। वह परमात्मा सब लोकों का प्रकाश करके सबको जानता, उसी से यह सूर्य सब लोकों को अपनी व्यवस्था से अपने-अपने में स्थान रखता है। सब समय में सब लोकों के साथ सूर्यलोक और सूर्यलोक के साथ वायु का, वायु के साथ परमात्मा का आकर्षण हो रहा है। सब लोकों में ईश्वर की रचना बल से ही अपना-अपना आकर्षण है। परमेश्वर की आकर्षण-शक्ति अनन्त है। इतना ही नहीं, अपितु जिससे जो उत्पन्न हुआ और जिसके बीज को धारण कर उस गर्भ से जिसकी उत्पत्ति हुई, उस-उस के साथ वा उसके प्रति वे सब लोक घूमते हैं। जैसे पृथिवी जल के परमाणुओं के साथ अपने परमाणुओं से उत्पन्न हुई है, अन्तरिक्ष में जल के मध्य में गर्भ के समान सदा रहती है और सूर्य उसके पिता के समान है। इसी कारण पृथिवी जल के सहित सूर्य के चारों ओर घूमती है। इसी प्रकार अन्य लोकों का भी सम्बन्ध देखिए- जैसे सूर्य का पिता वायु और आकाश माता के समान और चन्द्रमा का अग्नि पिता और जल माता है। परमेश्वर ने इन सब कम्पते इधर-उधर थरथराते हुए लोकों को धारण करते हुए आकर्षण के केन्द्र सूर्य में सब लोक-लोकान्तरों की कक्षाएँ तथा घूमने के मार्ग निश्चित किए। यही भाव धारण करना= दृढ़ करने का है। दोनों साथ हैं।

इसीलिए ऋषि ने लिखा कि- 'जिस परमात्मा ने तीक्ष्ण स्वभाव वाले सूर्य आदि और भूमि को धारण किया' यह मन्त्रगत **'दृढा'** का अर्थ है, जिसका अर्थ **'दृढाकृता'** है; अर्थात् दृढ़ किया।

''जिस जगदीश्वर ने सुख को धारण किया।''

प्रश्न- वह कौन-सा सुख है, जिसको जगदीश्वर ने धारण किया है?

उत्तर- प्रश्न एकदम समीचीन है तथा स्वाभाविक भी। इसका उत्तर भी उतना ही मनुष्य जीवन के यथार्थ उद्देश्य की ओर आकर्षण और उत्सुकता पैदा करने वाला है। ईश्वर स्तुति-प्रार्थना के साथ सत्य-भक्ति, सत्यप्रेम और सत्याचरण में योगयुक्त, विशुद्धात्मा जितेन्द्रिय, जिसका सब प्राणियों का आत्मरूप परमात्मा ही आत्मा है, जो करता हुआ भी लिप्त नहीं होता है। वह देखता हुआ, सुनता हुआ, सूँघता हुआ, खाता हुआ, जाता हुआ, स्वप्न लेता हुआ, श्वास लेता हुआ, प्रलपन करता हुआ, त्यागता हुआ, ग्रहण करता हुआ, निमेषोन्मेष अर्थात् आँख खोलता और मूँदता हुआ, सब इन्द्रियाँ अपने-अपने अर्थों में बरत रही हैं, ऐसा समझकर मैं कुछ नहीं करता हूँ- ऐसा योगी ही तत्त्ववित् है। ब्रह्म में सब कर्म अर्पण करके विषयासक्ति त्यागकर जल से कमल के पत्ते की तरह पाप से लिप्त नहीं होता। वह जो कुछ करता है, सह ममत्व बुद्धि रहित तथा वह इसी शरीर में भगवत्प्राप्ति रूप नैष्ठिकी शक्ति को प्राप्त करता है। यह शान्ति रूप आत्मरति, आत्मक्रीड, आत्मतुष्ट वह सुख है, जिसको जगदीश्वर ने धारण किया है। अब विचार करते हैं कि-

''जिस ईश्वर ने दुःखरहित मोक्ष को धारण किया है।''

प्रश्न- अभी तो सुख की चर्चा की है, जिसको जगदीश्वर ने धारण किया है; अब दुःखरहित मोक्ष की बात आ गई, इसको भी ईश्वर ने धारण किया है। प्रश्न- क्या वह सुख जिसकी अभी चर्चा की है, इस मोक्षसुख से भिन्न कोई वस्तु है? यदि है तो क्या अन्तर है? वह भी जगदीश्वर ने धारण किया है और यह भी ईश्वर ने धारण किया है?

उत्तर- मित्रवर! प्रश्न बुद्धिपूर्वक किया गया है। यद्यपि सुख और मोक्षसुख दोनों ही उसी एक ईश्वर ने धारण किए हैं, फिर भी दोनों में बहुत अन्तर है। वह पूर्व वर्णित सुख तो उपासना से ईश्वर को अपनी आत्मा और अपने आप (जीव) को ईश्वर का शरीर हो जाने पर प्राप्त हुआ है, परन्तु शरीरसहित संसार में रहते हुए ही है। कहा जा सकता है कि जब ईश्वर प्राप्त हो गया तो फिर इस शरीर में क्यों है, यह जीव?

मित्र! बात ऐसी है कि उद्देश्य तो ब्रह्म-प्राप्ति का पूर्ण हो गया है, अब कुछ भी प्राप्तव्य नहीं है, फिर भी शरीर में जीव इसी प्रकार है जैसे कुम्भकार के करणीय सभी कार्य पूर्ण हो जाने पर कोई कार्य शेष न रहने पर भी पूर्व दी हुई गति से कुम्भकार का चक्र घूमता-चलता रहता है, वैसे ही जीवात्मा के इस शरीर से सब काम पूर्ण हो जाने पर और कोई भी प्राप्तव्य कर्मशेष न रहने पर भी पूर्व कर्मानुगति से शरीर का चक्र चलता रहता है- शेष आयु पर्यन्त। जब तक चक्र की गति रुक नहीं जाती है, अर्थात् भोग का प्रवाह जो कर्मगति थी, रुक नहीं जाती, वह ईश्वर की आज्ञा पालन करता हुआ उस ईश्वर के सुख को जीवन्मुक्त होकर

प्राप्त करता रहेगा। परन्तु आयुचक्र समाप्त होने पर जब स्वेच्छा से इस शरीर को लता के बन्धन से जैसे खरबूजा पककर अलग हो जाता है, वैसे वह जन्म-मरण से विमुक्त हुआ शरीर को छोड़ देता है। वह जीव सीधा ब्रह्मलोक को प्राप्त करता है। यही मुक्ति **मोक्ष** कहलाती है, इतना उस सुख और इस मोक्षसुख में अन्तर है। अब इस मोक्ष में सर्वानन्द है। किसी भी प्रकार का कोई दुःख नहीं, सर्व दुःखरहित है, क्योंकि उस योगी के क्लेशों के मूल उच्छिन्न हो जाने के कारण पाप-पुण्य कर्माशय भुने हुए की तरह हो गया है, जो सर्वथा प्ररोह होने में असमर्थ है। यह पुण्य-पाप कर्माशय जन्म का हेतु है और जन्म दुःख का कारण है। अब दुःखों से छूट गए तो दुःखरहित मोक्ष ही है, जहाँ पर तीनों ही स्थूल-सूक्ष्म और कारण शरीर नहीं है। मात्र केवल जीवात्मा का विशुद्ध स्वरूप है, इससे आगे कुछ नहीं।

प्रश्न- 'नाक' शब्द का अर्थ दुःखरहित मोक्ष कैसे हुआ?

उत्तर- 'कः' का अर्थ सुख होता है। इसके साथ प्रतिषेधात्मक **'अ'** के विद्यमान हो जाने पर 'अकः' शब्द बना; अर्थात् जो सुख का विपरीतार्थक हो गया, यह **अकः** शब्द। अर्थात् **'अकः'** का अर्थ हुआ- **दुःख**। अब 'अकः' शब्द के साथ एक और **'न'** प्रतिषेध जुड़ गया, तो शब्द बना **न+अकः= नाकः;** जिसका अर्थ हो गया, जो 'अकः' अर्थात् दुःख नहीं है, वह 'नाकः' है। जहाँ दुःख नहीं है, वह दुःखरहित हुआ।

'नाक' शब्द तैयार कैसे होता है? देखिए-

न कः - अकः और **न अकः-नाकः।** इस प्रकार यह शब्द तैयार हुआ। अर्थात् जीव की वह स्थिति जब जीव **'न कः'** सुख में रहता है और **'न अकः'** दुःख में रहता है, उसी स्थिति की सांसारिक सुख-दुःख से रहित नित्यानन्द स्वरूप **मोक्ष** कहते हैं। और मित्रवर! दुःखरहित है ही वह, जब सब दुःखों से छूट-मुक्त हो गए हों, जिसके लिए स्वाभाविक रूप से सब जीव प्रयत्न करते हैं, वह मोक्ष ही कहलाता है। इसलिए ऋषि ने 'नाकः' का अर्थ दुःखरहित मोक्ष किया है। जिसको ईश्वर ही धारण करता है, अर्थात् जो ईश्वर को प्राप्त कर लेता है, वही ब्रह्मलोक को प्राप्त जीवात्मा अव्याहत गति से स्वच्छन्दता से विचरण करता हुआ ब्रह्म-साहचर्य में सब आनन्दों को प्राप्त करता है। अब अग्रिम तथ्य की ओर चलते हैं कि-

''जो आकाश में सब लोक-लोकान्तरों को विशेष मानयुक्त अर्थात् जैसे आकाश में पक्षी उड़ते हैं, वैसे सब लोकों का निर्माण करता और भ्रमण कराता है।''

सत्व, रज और तमस् की सम्यावस्था प्रकृति से उत्पन्न पृथक्-पृथक् वर्तमान तत्व अवयवों= परमाणुओं का प्रथम संयोग आरम्भ होता है। उन संयोग विशेषों से अवस्थान्तर होते हैं, फिर उनसे स्थूलाकार होते हैं। ये स्थूलाकार प्रति लोक-लोकान्तरों की रचना दृष्टि से होते हैं। रचना के लिए परमाणु समूहों के परिमाण बनाता है, ये परिमाण सब घूमते हुए ही आकार को प्राप्त होते हैं। लोकों के निर्माण की दृष्टि अर्थात् जैसा लोक का आकार प्रभु को सर्वज्ञ ज्ञान से करना है, वैसा ही उन लोकों के परमाणु समूहों का आरम्भक द्रव्य बनाता है, उसी को **'विमान'** अर्थात् विशेष मानयुक्त=विशेष परिमाणयुक्त कहा जाता है। ये विशेष मानयुक्त लोक-लोकान्तर आकाश में ऐसे ही बनते हैं, जैसे वी+मान=विमान अर्थात् आकाश में पक्षी मानसहित अर्थात् अपने-अपने हल्के वा भारी मान= विशेषयुक्त परिमाणयुक्त उड़ते हैं, वैसे ही परमात्मा भिन्न-भिन्न विशेष परिमाणयुक्त लोक द्रव्य समूहों के भीतर अन्तर्यामी रूप से प्रविष्ट होकर, इन लोकों का निर्माण करता है और भ्रमण करता है। यह ईश्वर का विचित्र आश्चर्यकारी कृत्य है, जिसको सिवाय ईश्वर के कोई नहीं कर सकता है।

ऐसे उस सुखदायक ईश्वर की प्राप्ति की कामना कौन नहीं करेगा? अर्थात् सब करेंगे। यहाँ ईश्वर को ऋषि ने **परब्रह्म** शब्द का प्रयोग किया। इसका अर्थ है- जिसकी ऊपर मन्त्र में चर्चा की गई है, वह अपरब्रह्म है और इस चित्र-विचित्र संसार के अन्तः=भीतर अन्तर्यामीरूप में विराज रहा है। जो दृश्य नहीं है, वह परब्रह्म है। हम लोग सब सामर्थ्य से उसका परिचरण= सेवन अर्थात् विशेष भक्ति करें।

- आचार्य वेदप्रकाश श्रोत्रिय
२४३, अरावली अपार्टमेन्ट, अलखनन्दा, नई दिल्ली

साभार- उपासना-विज्ञान

सत्यार्थ मित्र बनें

संस्कार वीथिकास्थ (गर्भाधान संस्कार)

न्यास के कार्यों को गति प्रदान करने के लिए 5100 रु. (पाँच हजार एक सौ) वार्षिक का सहयोग प्रदान करें।

आपका मात्र ५१०० रुपये वार्षिक का सहयोग न्यास के कार्य को अद्वितीय गति प्रदान कर सकता है।

हमारे अत्यन्त आत्मीय बन्धुजन!

इस अपील को मेरी व्यक्तिगत अपील कहिए अथवा न्यास की अपील समझिए। यह आप तक पहुँचे और आपकी आत्मीयता हमें प्राप्त हो, इसी नाते हम प्रथम बार अर्थ सहयोग का निवेदन कर रहे हैं।

आपको यह जानकारी होगी ही कि नवीन, आकर्षक प्रकल्पों का निर्माण कर न्यास सहस्रों लोगों तक वैदिक संस्कृति के मूल तत्त्वों को अग्रप्रसारित कर रहा है। सत्यार्थ प्रकाश भवन, नवलखा महल, उदयपुर द्वारा आर्यावर्त्त चित्रदीर्घा में वेद, वेद के प्रादुर्भाव, भारतीय ऋषियों के योगदान, योगिराज श्री कृष्ण और भगवान राम के पावन जीवन–चरित्र, मेवाड़ की माटी के गौरव महाराणा प्रताप, आर्यसमाज के रत्नों, भारत को स्वतन्त्रता दिलाने वाले क्रान्तिकारियों, सत्यार्थ प्रकाश चित्रावली एवं महर्षि दयानन्द के जीवन चरित्र के माध्यम से व संस्कार वीथिका के माध्यम से मानव निर्माण की पूरी योजना आगन्तुकों के सामने रखी जा रही है। इस क्रम में मानों महर्षिवर की संस्कार विधि मूर्तरूप में चित्रित हो गयी है।

वहीं उच्चतम गुणवत्ता के 3D थियेटर का निर्माण कर महापुरुषों के जीवन–चरित्र का दिग्दर्शन भी कराया जा रहा है। यहाँ यह अंकित करना आवश्यक है कि मुक्त हस्त से दिए हुए उदार अर्थ के सहयोग से भव्य संस्कार वीथिका परिसर व थियेटर का निर्माण माननीय सुरेश चन्द्र जी आर्य; अहमदाबाद और माननीय दीनदयाल जी गुप्त; कोलकाता के पवित्र सहयोग से हो पाया है एवं संस्कारों का निर्माण आर्यजनों के सामूहिक सहयोग से एकत्रित धन से हुआ है। परन्तु इनको गति देने के लिए, वर्ष में सारे प्रकल्प 365 दिन गतिशील रहें, इसके लिए आवश्यक है कि कुछ लोग आगे आएँ और प्रतिवर्ष अपना योगदान दें, इसीलिए आपसे यह निवेदन कर रहा हूँ। **मैं व्यक्तिगत रूप से अनुगृहीत हूँगा अगर आप मात्र 5100 सौ रुपये प्रतिवर्ष देने का संकल्प लेंगे।**

न्यास का एकाउन्ट नम्बर भी नीचे अंकित है। न्यास को प्रदत्त दान आयकर अधिनियम की धारा 80G के अन्तर्गत कर मुक्त है। हमें आशा ही नहीं विश्वास है कि आप हमारी प्रार्थना को स्वीकार कर 5100 रुपये वार्षिक का यह अर्थ सहयोग प्रदान करने की कृपा करेंगे। **निश्चित मानिये आपके सहयोग से जो ऊर्जा और गति हमें मिलेगी वह लाखों लोगों तक वैदिक संस्कृति के उदात्त मूल्यों को सम्प्रेषित करने में मील का पत्थर साबित होगी।**

निवेदक– अशोक आर्य, अध्यक्ष–न्यास

चैक श्रीमद् दयानन्द सत्यार्थ प्रकाश न्यास के पक्ष में बना न्यास के पते पर भेजें। अथवा यूनियन बैंक ऑफ इण्डिया, मेन ब्रांच, दिल्ली गेट, उदयपुर
बैंक एकाउन्ट का विवरण : AC. No. : 310102010041518, IFSC CODE- UBIN 0531014, MICR CODE- 313026001 में जमा करा कृपया सूचित करें।

जिन महानुभावों ने हमारे एक आग्रह पर न्यास को सम्बल प्रदान करने हेतु 5100 रु. (इक्कावन सौ) प्रतिवर्ष देकर सत्यार्थ मित्र बनना स्वीकार किया उनके चित्र को यहाँ हृदय से धन्यवाद प्रेषित करते हुए दे रहे हैं। बाकी साथियों के चित्र अगले अंक में दिए जायेंगे।

श्री सत्यप्रकाश भारद्वाज, फरीदाबाद

श्री प्रेमप्रकाश शर्मा, देहरादून

श्री सत्यप्रकाश शर्मा, उदयपुर

श्रीमती ममता अग्रवाल, कोसी

श्री रामजीवन मिश्र, जयपुर

सुश्री राजेश भटनागर, जयपुर

डॉ. जयदत्त उप्रेती, अलमोड़ा

श्री गौर मोहन माथुर, श्रीगंगानगर

श्री सुदर्शन सिंह कोठारी, उदयपुर

श्री भूपेन्द्र शर्मा, उदयपुर

श्री जितेन्द्र भाटिया, दिल्ली

श्री राजकुमार गुप्ता, उदयपुर

श्री ओम प्रकाश वर्मा, जयपुर

श्री सोमरत्न आर्य, अजमेर

श्री राजेन्द्र मुनि, कोटा

श्रीमती सुनीता भदौरिया, ग्वालियर

आत्म निवेदन

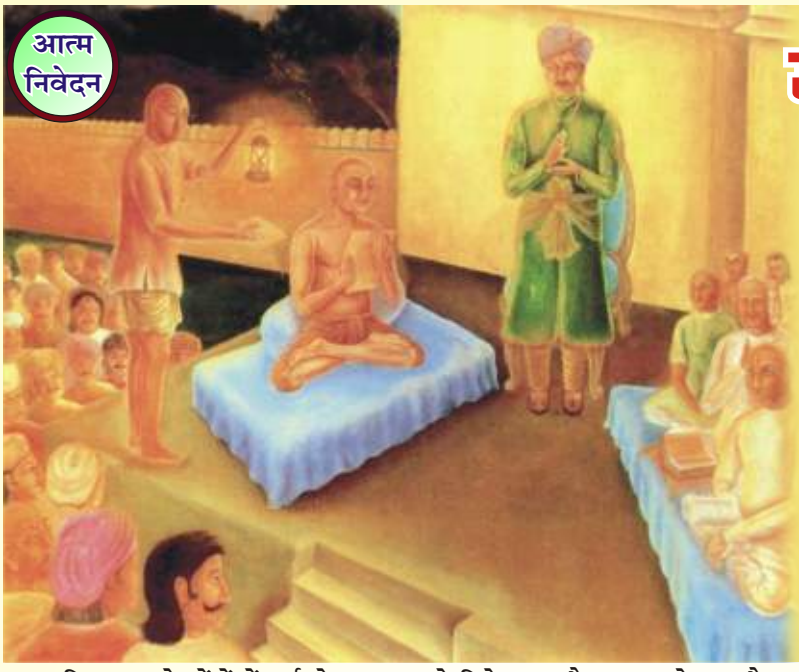

मतैक्य का आधार सत्य और शास्त्रार्थ

क्या दुनिया भर के लोंगों में धर्म के नाम पर जो विद्वेष भरा है वह दूर होकर मतैक्य हो सकता है? विकट प्रश्न है पर महर्षि दयानन्द की बात करें तो उनका उत्तर हाँ में है। ऋषियों के वाक्य अत्यन्त गम्भीर आशय से युक्त होते हैं उनको समझने के लिए उन पर चिन्तन करने की, मनन करने की आवश्यकता होती है तभी उनका सही अभिप्राय ज्ञात होता है। महर्षि दयानन्द सरस्वती महाराज ऋषि कोटि के आप्तपुरुष थे, उन्होंने जो कुछ लिखा अगर उसे ठीक से समझ लिया जाए तो समाज की दशा और दिशा में बहुत बड़ा अन्तर आ सकता है। स्वामी जी का मानना था कि समस्त संसार में एकमत स्थापित हो यह सम्भव है इस कार्य को प्रयत्न करके किया जा सकता है। इसके लिए आवश्यक है कि सभी मतों के श्रेष्ठ विद्वान् सभ्य पुरुष साथ मिलकर विचार-विमर्श करें और सत्य का निर्णय करने के पश्चात् सत्य को ग्रहण करें और असत्य को त्याग दें। इसी भावना को लेकर स्वामी जी ने दिल्ली में जिस समय महारानी विक्टोरिया का दरबार लगा था, उस समय अनेक मतमतान्तरों के श्रेष्ठ पुरुषों को अपने डेरे पर बुला करके उनसे विचार-विमर्श करना चाहा था, परन्तु लोग विक्टोरिया की स्तुति में इतने व्यस्त थे कि स्वामी जी का यह प्रयास विशेष सफल नहीं रहा। यद्यपि मुंशी अलखधारी, केशवचन्द्र सेन आदि विद्वत् जन अवश्य आए थे।

मतैक्य में सत्य व वाद विवाद की भूमिका को समझने के लिए हम महर्षि दयानन्द का एक अमर वाक्य प्रस्तुत कर रहे हैं जो कि उन्होंने अपने कालजयी ग्रन्थ सत्यार्थप्रकाश की भूमिका में लिखा है-

'यदपि आजकाल बहुत से विद्वान् प्रत्येक मतों में हैं। वे पक्षपात छोड़ सर्वतन्त्र सिद्धान्त अर्थात् जो-जो बातें सब के अनुकूल, सब में सत्य हैं, उनका ग्रहण और जो एक दूसरे से विरुद्ध बातें हैं उनका त्याग कर परस्पर प्रीति से वर्त्तें वर्त्तावें तो जगत् का पूर्ण हित होवे। क्योंकि विद्वानों के विरोध से अविद्वानों में विरोध बढ़कर अनेकविध दुःख की वृद्धि और सुख की हानि होती है। इस हानि ने, जो कि स्वार्थी मनुष्यों को प्रिय है, सब मनुष्यों को दुःखसागर में डुबा दिया है।'

हम अनेक बार कहते हैं कि ऋषि दयानन्द ने सत्यार्थ प्रकाश में जो भूमिका दी है और इसके अतिरिक्त जो चार अनुभूमिकाएँ हैं उन्हें ठीक से पढ़ना चाहिए तभी ऋषि दयानन्द का अभिप्राय सही-सही हमारे सामने प्रकट हो पाता है। उपरोक्त वाक्य की बात ही करें तो सबसे पहले सदाशयता और विनम्रता को रेखांकित किया गया है। पहली बात जो यहाँ कही गई वह यह है कि 'प्रत्येक मत में अनेक विद्वान् हैं।' आज हम देखते हैं कि अनेक मतों की बुनियाद में यह अहंकार सन्निहित होता है कि केवल उनकी बात ही सच्ची है अन्य मतों में कोई विद्वान् ना होने से उनकी बातें माननीय नहीं हैं। परन्तु स्वामी जी ऐसा नहीं मानते। वे सदाशयता व विनम्रता प्रकट करते हुए यह स्वीकार करते हैं कि अन्य मतों में भी विद्वान् हो सकते हैं। अब यहाँ प्रश्न उठता है कि विद्वान् की परिभाषा आखिर क्या है तो यहाँ जान लेना चाहिए कि जो पक्षपात रहित, अपने हृदय में सत्य को स्थापित किए हुए, उच्च चरित्र वाले धर्मात्मा लोग हैं वही विद्वान् हो सकते हैं, केवल उच्च शिक्षित व्यक्ति को विद्वान् नहीं माना गया है

वह धार्मिक भी होना चाहिए। आगे स्वामी जी का आग्रह सत्य को स्वीकार करने के दृढ़ निश्चय से है। इसीलिए स्वामी जी आगे इसी वाक्य में लिख रहे हैं कि सब मत-मतान्तरों के ऐसे विद्वान् अगर अपने पक्षपात को छोड़ दें अथवा पूर्वाग्रह को त्याग दें और सत्य के अन्वेषण में लग जाएँ तो वे सर्वतन्त्र सिद्धान्त को अन्वेषित कर सकते हैं। सर्वतन्त्र सिद्धान्त की व्याख्या करते हुए स्वामी दयानन्द लिखते हैं कि जो-जो बातें सब के अनुकूल हों, सब में सत्य हों, उनका ग्रहण किया जाना चाहिए और जो एक दूसरे से विरुद्ध बातें हैं उनका त्याग कर देना चाहिये।

सर्वतन्त्र सिद्धान्त का निर्णय आखिर कैसे हो? इस बारे में स्वामी जी बलपूर्वक यह कहना चाहते हैं कि जब हृदय में सत्य के ग्रहण और असत्य के त्यागने के भाव प्रबल हों तब यह कोई कठिन समस्या नहीं रह जाती। वे सत्यार्थ प्रकाश के ११वें समुल्लास में एक उदाहरण देते हैं जिसमें एक जिज्ञासु जो कि सत्यमार्ग का अन्वेषण करना चाहता है वह सहस्रों लोगों के बीच किस प्रकार सत्य की स्थापना कर सकता है, इसे दर्शाने के लिए निम्न उदाहरण देते हैं-

'तब वह उन सहस्र की मण्डली के बीच में खड़ा होकर बोला कि सुनो सब लोगो! सत्यभाषण में धर्म है वा मिथ्या में? सब एक स्वर होकर बोले कि सत्यभाषण में धर्म और असत्यभाषण में अधर्म है। वैसे ही विद्या पढ़ने, ब्रह्मचर्य करने, पूर्ण युवावस्था में विवाह, सत्संग, पुरुषार्थ, सत्य व्यवहार आदि में धर्म और अविद्या ग्रहण, ब्रह्मचर्य न करने, व्यभिचार करने, कुसंग, आलस्य, असत्य व्यवहार, छल, कपट, हिंसा, परहानि करने आदि कर्मों में?

सब ने एक मत होके कहा कि विद्यादि के ग्रहण में धर्म और अविद्यादि के ग्रहण में अधर्म। तब जिज्ञासु ने सब से कहा कि तुम इसी प्रकार सब जने एकमत हो सत्य-धर्म की उन्नति और मिथ्यामार्ग की हानि क्यों नहीं करते हो।'

यहाँ स्पष्टतः एक बात रेखांकित है कि मत अथवा विचारों में परिवर्तन का आधार केवल और केवल विचार-विमर्श अथवा सत्य उपदेश अथवा शास्त्रार्थ है इसके अतिरिक्त बल का प्रयोग, छल का प्रयोग, लालच अथवा इसी प्रकार के अन्य साधन कभी भी सत्य को स्थापित नहीं कर पाते। बलपूर्वक मत-अंतरण आत्मा को स्पर्श नहीं करता। इसलिए मत स्वीकारने में व्यक्ति को पूर्ण स्वतंत्रता होनी चाहिए। विद्वानों का कार्य केवल इतना है कि वह सत्य और असत्य को पृथक् करके उस व्यक्ति के सामने रखते हैं। अतः ऋषि दयानन्द लिखते हैं-

'इसीलिए विद्वान् आप्तों का यही मुख्य काम है कि उपदेश वा लेख द्वारा सब मनुष्यों के सामने सत्याऽसत्य का स्वरूप समर्पित कर दें, पश्चात् वे (मनुष्यगण) स्वयं अपना हिताहित समझ कर सत्यार्थ का ग्रहण और मिथ्यार्थ का परित्याग करके सदा आनन्द में रहें।' और यही उन्होंने अपने जीवन में किया। सत्य की स्थापनार्थ उन्होंने सैंकड़ों शास्त्रार्थ किये।

अब आजकल और आज से कुछ शताब्दी पूर्व तक मत-अंतरण के लिए क्या-क्या दुष्चक्र नहीं रचे जाते यह हमारे समक्ष है, इतिहास के गर्त में छिपी लहू की रेखाएँ सब कुछ वर्णित कर देती हैं। परन्तु वह सब सभ्य समाज में माननीय नहीं होना चाहिए। स्वमत के विस्तार हेतु लड़े गए तथाकथित धर्म-युद्ध वास्तव में तो मानवता के दुश्मन और अधर्म ही थे। उन्हें .... स्तुत्य कभी नहीं कहा जा सकता।

सभ्य मनुष्य समाज में मनुष्य का उद्देश्य अपने विचार के लोगों की संख्या येन-केन-प्रकारेण बढ़ाना नहीं है बल्कि सत्य की स्थापना करना है और स्वयं भी सत्य को स्वीकार करना है। सच मानिये यह कोई बहुत कठिन काम नहीं है क्योंकि मनुष्य के आत्मा को सहज ही अधिकांश मामलों में सत्य के दर्शन हो ही जाते हैं इस बात को महर्षि दयानन्द जी महाराज भी अपने कालजयी ग्रन्थ सत्यार्थ प्रकाश में लिखते हैं कि-

'मनुष्य का आत्मा सत्याऽसत्य का जानने वाला है तथापि अपने प्रयोजन की सिद्धि, हठ, दुराग्रह और अविद्यादि दोषों से सत्य को छोड़ असत्य में झुक जाता है।'

यहाँ स्पष्ट रूप से कहा गया है कि मनुष्य का आत्मा तो सत्य का ही ग्रहण करना चाहता है परन्तु परम्पराओं के पालन का

आग्रह, धर्म के मामले में बुद्धि की दखल नहीं होनी चाहिए ऐसी मान्यता, (अभी कल ही हम एक मतस्थ विद्वान् का प्रवचन सुन रहे थे जो कह रहे थे कि 'दीन का सम्बन्ध नकल से है न कि अकल से' अर्थात् दीन में जो कुछ कह दिया है उसकी नकल करो न कि अकल लगाकर उस पर प्रश्न करो) अथवा ऐसे क्षेत्रों को मान्यता देना जिन पर कभी प्रश्नवाचक चिह्न ना उठाए जा सकें, मनुष्य को सत्य से परे कर देता है ।

ऊपर जो जिज्ञासु वाला उदाहरण दिया गया है उससे बड़ा स्पष्ट है कि किसी भी व्यक्ति से पूछे कि सत्य बोलना धर्म है या असत्य, विद्या ग्रहण करना सत्य है अथवा अविद्या ग्रहण, तो संसार का प्रत्येक मनुष्य चाहे वह कहीं रहता हो, ईश्वर के बारे में और उसके स्वरूप के बारे में उसकी जो भी जानकारी हो या किसी भी प्रकार के कर्मकाण्ड को करने वाला हो वा किसी भी भाषा को बोलने वाला हो, हर व्यक्ति यही कहेगा कि सत्य और विद्या का अवलम्बन ही उचित है, सही है। इसलिए यही धर्म है। परमपिता परमात्मा ने अन्य प्राणियों की तुलना में मनुष्य को 'विवेक' का ही तो उपहार दिया है अतः मनुष्य को इस विवेक का प्रयोग करना ही चाहिए। अगर वह ऐसा नहीं करता है तो फिर पशु में और उस में क्या अन्तर है? ऐसा नहीं करने के कारण हठ और दुराग्रह के चलते एक सत्य मत की स्थापना संसार में नहीं हो पा रही है, जबकि ऐसा हो पाना असंभव नहीं है।

इस आलेख में बार-बार सत्य की चर्चा हो रही है तो प्रश्न यह भी उपस्थित होता है कि सत्य आखिर है क्या? ऋषि दयानन्द कहते हैं कि जो पदार्थ जैसा है उसको वैसा ही कहना सत्य है।

वे सत्यार्थ प्रकाश में लिखते हैं-

'वह सत्य नहीं कहाता जो सत्य के स्थान में असत्य और असत्य के स्थान में सत्य का प्रकाश किया जाय। किन्तु जो पदार्थ जैसा है, उसको वैसा ही कहना, लिखना और मानना सत्य कहाता है।

उदाहरण के तौर पर जड़ पदार्थ को चेतन कहना अथवा चेतन को जड़ कहना असत्य है और जड़ को जड़ तथा चेतन को चेतन कहना सत्य है।

जड़ और चेतन की ही बात करें तो अधिकांश मामलों में पदार्थ के वास्तविक स्वरूप को जानना भी कोई बहुत अधिक कठिन नहीं है। अधिकांश मामलों में कोई दुविधा उत्पन्न नहीं होती। इस बात को स्पष्ट करने के लिए एक बहुत छोटा सा उदाहरण देना उपयुक्त होगा।

एक परिवार जो कि मूर्ति पूजा में विश्वास रखता था (यद्यपि इसकी सार्थकता पर उन्होंने कभी विवेक पूर्वक विचार नहीं किया

था परन्तु परम्परा से ऐसा मानते चले आ रहे थे इसीलिए इसको सत्य मानते थे) उस परिवार में विवाह हुआ और जो नववधू आई वह विचारपूर्वक मूर्तिपूजा की निःसारता को जानती थी। परन्तु उसने परिवार के अन्य सदस्यों से कभी तर्क नहीं किया। एक दिन उसकी सास उसको साथ लेकर मन्दिर गई। उसने कोई एतराज नहीं किया पर मन ही मन सत्य प्रकट करने के लिए एक योजना अवश्य बनाई। जैसे ही वे मन्दिर पहुँचे तो मन्दिर के द्वार पर आक्रमण की मुद्रा में दोनों ओर दो पत्थर के शेर बने हुए देखे। बस फिर क्या था वधू उन शेरों को देखकर के उल्टे पैर भागने लगी और घर आकर ही दम लिया। अत्यन्त आश्चर्य में भरी हुई उसकी सास उसके पीछे-पीछे घर आई और बोली कि बेटा तुम मन्दिर से भाग क्यों आईं? तो उसने उत्तर दिया कि 'वहाँ दो खूंखार शेर खड़े थे, वे मुझ पर आक्रमण करते और मुझे खा जाते', तो सास ने आश्चर्य मिश्रित कौतूहल के भाव से उससे कहा कि 'अरे पगली! वे शेर तो पत्थर के थे, वे क्या कर सकते थे।' इस पर बहू ने बड़ी विनम्रता के साथ सास को कहा कि 'जब पत्थर के शेर कुछ नहीं कर सकते तो इसी तर्क के अनुसार पत्थर की मूर्ति भी कुछ नहीं कर सकती।' तो इस उदाहरण से हम देख सकते हैं कि यह समझना कि पत्थर की मूर्ति खा नहीं सकती फिर भी हम उसे भोग चढ़ाते हैं, पत्थर को शीत नहीं सताता फिर भी हम उसे पंखा झलते हैं, पत्थर अपने सामने की हुई स्तुति को नहीं समझता फिर भी हम आरती का थाल घुमाते हैं इत्यादि-इत्यादि अविद्या ही है। तो इस निष्कर्ष पर पहुँचना भी कोई बहुत कठिन काम नहीं है कि मूर्तिपूजा परमेश्वर की आराधना का विकल्प कभी नहीं हो सकती। परन्तु क्योंकि परम्परा से चली आ रही है हम उस पर विवेक पूर्वक विचार नहीं करना चाहते अतः उसे मानते चले आ रहे हैं।

अब यहाँ प्रश्न उपस्थित हो सकता है कि एक दूसरे से विरुद्ध बातें तो मत-मतान्तरों में भरी पड़ी हैं और प्रत्येक व्यक्ति अपनी बात को ही सही मानेगा तो बात कैसे बनेगी, तो यहाँ यह ध्यान रखना चाहिए कि पूर्वाग्रह को तो त्यागना ही पड़ेगा यह बात तो पहले ही कह दी। पूर्वाग्रह त्यागने के पश्चात् सत्य-स्थापना कठिन नहीं।

जब सत्य को ग्रहण करने की प्रतिज्ञा न हो तब तो कुछ नहीं हो सकता, इसीलिए ऋषि दयानन्द जी महाराज ने जहाँ अपने जीवन में सैकड़ों शास्त्रार्थ करके लोगों के सामने सत्य को प्रकट किया उनमें से हजारों मनुष्यों ने उस सत्य को स्वीकार किया परन्तु लाखों मनुष्य ने उसे अपना विरोध मानकर महर्षि दयानन्द का अपमान किया, उनके प्राण लेने का प्रयत्न भी किया। जब ऋषि दयानन्द ने सत्य-सत्य अर्थ के प्रकाशन के लिए सत्यार्थ प्रकाश को प्रकाशित किया तो बीसियों जगह उन्होंने सत्य को ग्रहण करने का ही आग्रह किया।

११वें समुल्लास की अनुभूमिका में वे लिखते हैं-

'मनुष्य जन्म का होना सत्याऽसत्य का निर्णय करने-कराने के लिये है न कि वाद-विवाद, विरोध करने कराने के लिये। इसी मत-मतान्तर के विवाद से जगत् में जो-जो अनिष्ट फल हुए, होते हैं और आगे होंगे उन को पक्षपातरहित विद्वज्जन जान सकते हैं।

'जब तक इस मनुष्य जाति में परस्पर मिथ्या मत-मतान्तर का विरुद्ध वाद न छूटेगा तब तक अन्योऽन्य को आनन्द न होगा।'

'यदि हम सब मनुष्य और विशेष विद्वज्जन ईर्ष्या-द्वेष छोड़ सत्याऽसत्य का निर्णय करके सत्य का ग्रहण और असत्य का त्याग करना-कराना चाहैं तो हमारे लिये यह बात असाध्य नहीं है।'

यह विचार-विमर्श का काम प्रीति पूर्वक होना चाहिए इसे रेखांकित करते हुए वे १२वें समुल्लास की अनुभूमिका में लिखते हैं-

'जब तक वादी प्रतिवादी होकर प्रीति से वाद वा लेख न किया जाय तब तक सत्यासत्य का निर्णय नहीं हो सकता।'

फिर यहीं पर आगे लिखते हैं-

'इसलिए सत्य के जय और असत्य के क्षय के अर्थ मित्रता से वाद वा लेख करना हमारी मनुष्यजाति का मुख्य काम है। यदि ऐसा न हो तो मनुष्यों की उन्नति कभी न हो।'

यदि वादी प्रतिवादी सत्याऽसत्य निश्चय के लिये वाद प्रतिवाद करें तो अवश्य निश्चय हो जाये।

इस अंक में लेख को सीमा में रखने हेतु केवल एक मुद्दे की चर्चा करते हैं। अभी कुछ समय पूर्व तक और किन्हीं अर्थों में अभी

तक स्त्री-पुरुष की समानता को लेकर अन्यायपूर्ण धारणाएँ पूरे विश्व में व्याप्त थीं। स्त्री-पुरुषों की समानता की बात करें और पक्षपातरहित होकर शुद्ध मन से विचार करें तो न्याय तो यही है परमात्मा की सृष्टि में ये दोनों बराबर हैं। पालन-पोषण, शिक्षा-दीक्षा के क्रम में कोई भी भेदभाव मानवीय नहीं है। यही वेदोक्त शिक्षा भी है। परन्तु इसके विपरीत कोई शक्तिशाली पुरुष अथवा तथाकथित धर्मगुरु चाहे ईश्वर के नाम पर ही क्यों नहीं, यह प्रचारित करता है अथवा नियम बना देता है कि पढ़ने का अधिकार केवल पुरुषों को है, महिलाओं को नहीं तो यह अन्याय होने से, ईश्वर के गुण-कर्म-स्वभाव के अनुकूल न होने से मान्य नहीं हो सकता। इस व्यवस्था को अन्याय कहा जाय यही धर्म है, मानवीय कर्तव्य है। इसी प्रकार कुछ मतों में नारी को बुद्धि में तथा धर्म में पुरुषों के मुकाबले आधा माना गया है, यह सही नहीं है। एक अन्य मत की मान्य पुस्तक में वह माँ जो शिशु को जन्म देती है अशुद्ध है और जो बालिका को जन्म देती है दुगुनी अशुद्ध है। क्या यह व्यवस्था अन्याय नहीं है? लड़की के जन्म हेतु यह प्रताड़ना क्यों? ऐसी बातों को अमान्य करने में सत्यप्रेमी जन को कोई हिचकिचाहट नहीं होनी चाहिए। आज प्रगतिशीलता के साथ नारी और पुरुष की समानता प्रायः स्थापित हो चुकी है परन्तु फिर भी तथाकथित ईश्वरीय पुस्तक में होने की बात के आधार पर इस समानता के विरुद्ध व्यवहार किया जाता है और पारिवारिक व सामाजिक जीवन में वैमनस्य और अन्याय की स्थापना होती है तथा इस विचारधारा के मानने वाले देशों में अन्यायपूर्ण कानून भी बनाए गए हैं, जो प्रशस्त नहीं है।

महर्षि दयानन्द सरस्वती ने अपने अमर ग्रन्थ सत्यार्थ प्रकाश में सत्य को जाँचने की कसौटियाँ भी दी हैं उन पर आगे विचार करेंगे।

- अशोक आर्य
सत्यार्थ प्रकाश भवन, नवलखा महल, उदयपुर
चलभाष- ०९३१४२३५१०१, ०८००५८०८४८५

प्रकृति और जीव

'यत्किञ्च जगत्यां जगत्'

हम अपनी इन्द्रियों की सहायता से, तथा अनुमान से संसार के जिन चर और अचर पदार्थों को जान सकते हैं, वे जगत् शब्द के अन्दर समा जाते हैं। उस जगत् को सभी लोग, फिर वे आस्तिक हों या नास्तिक, स्वीकार कर लेते हैं, परन्तु वे सब पदार्थ जिस मसाले से बने हैं उसकी सत्ता मानने में कुछ लोगों को संकोच हो जाता है। सृष्टि की रचना के सम्बन्ध में न्यायदर्शन के व्याख्याकार प्रायः घड़े का दृष्टान्त दिया करते हैं। सर्वांश में अनुकूल न होता हुआ भी वह दृष्टान्त रचना के सिद्धान्त को स्पष्ट करने के लिए बिल्कुल पर्याप्त है। किसी स्थूल वस्तु की रचना के लिए दो करणों की अनिवार्य आवश्यकता होती है। एक तो वह मसाला या मूल सामग्री, जिससे उसे बनाया जाता था और दूसरा उसका निर्माता। जब हमने यह मान लिया कि स्थूल जगत् का निर्माता ईश्वर है, तो हमें यह भी स्वीकार करना चाहिए कि यह जगत् मूल सामग्री के बिना नहीं बन सकता। उस मूल सामग्री का जंगली या प्रकृति नाम से निर्देश होता है। प्रकारान्तर से हम यह कह सकते हैं कि इस कारणरूप व्यापक प्रकृति का बना जितना चराचर जगत् है, उसके अन्दर और बाहर ईश्वर व्याप्त है।

कुछ विचारक प्रकृति की सत्ता को स्वीकार नहीं करते। वे इस जगत् को ईश्वर की कल्पना का ही परिणाम मानते हैं। उनके सिद्धान्त का सार यह है कि या तो इस जगत् का कोई उपादान कारण है ही नहीं और यदि है भी तो वह ईश्वर से भिन्न नहीं? ईश्वर की माया के संयोग से जगत् के रूप में परिणत हो जाता है।

जगत् की रचना के सम्बन्ध में दूसरी कल्पना यह की जाती है कि यह सारा जगत् केवल ईश्वर की आज्ञा से बन गया- अर्थात् ईश्वर ने कहा कि बन जा, और यह चराचर, तथा जड़-चेतन संसार उत्पन्न हो गया।

यह विचार कुछ धार्मिक ग्रन्थों के आधार पर फैला है, जिनमें से मुख्य ओल्ड टैस्टेमेंट (बाइबिल का पूर्वार्द्ध) है। हमें परीक्षा करके देखना चाहिए कि क्या इन दोनों कल्पनाओं में से किसी को हेतु संगत होने के कारण स्वीकार किया जा सकता है?

क्या जगत् असत्य है ?

मायावाद का आधार उपनिषदों को माना जाता है। ईशोपनिषद् की पहली ऋचा का पूर्वार्द्ध ही उनके मन्तव्य का खण्डन कर देता है। 'यह जगत् ईशावास्य है।' इस कथन से यह स्पष्ट सिद्ध होता है कि ईश और जगत् दोनों सत्य हैं और भिन्न हैं, आच्छादित करने वाला आच्छादित होने वाले से भिन्न होना चाहिए। घर और घर में रहने वाला- दो अलग-अलग पदार्थ होने चाहिए। उपनिषद् के प्रथम वाक्य से ही मायावाद का निषेध हो जाता है।

यदि इस कल्पना को मान लिया जाय कि केवल एक ब्रह्म ही सत्य है, शेष सब मिथ्या है और इस जगत् की अनुभूति

केवल भ्रान्ति या माया का परिणाम है तो कुछ प्रश्न उत्पन्न होते हैं जिनके उत्तर सरल नहीं हैं।

पहला प्रश्न यह है कि जगत् जिस भ्रान्ति या माया का परिणाम है, वह किसमें रहती है? क्या ब्रह्म में? जब केवल ब्रह्म ही सत्य है, अन्य कोई नहीं तो निश्चय ही ब्रह्म माया का आधार होना चाहिए। उपनिषद् में उसे शुद्ध और अपापविद्ध कहा है। शुद्ध और निर्लेप में माया कैसी? और सर्वज्ञ में भ्रान्ति कैसी?

दूसरा प्रश्न यह है कि माया या भ्रान्ति स्वयं कोई सत्य पदार्थ है या नहीं? यदि है तो दो सत्य पदार्थ मानने पड़ेंगे, परन्तु यदि असत् है तो जिस की स्वयं कोई सत्ता नहीं, वह जगत् को कैसे बना सकती है?

तीसरा प्रश्न यह है कि यदि केवल एक ब्रह्म ही सत् है और आत्मा तथा प्रकृति की सत्ता ही नहीं तो वेदोक्त प्रार्थनाएँ, उपासनायें और साधनायें व्यर्थ हो जाती हैं। क्या ब्रह्म अपनी प्रार्थना और उपासना स्वयं करता है? क्या साधना द्वारा ब्रह्म ही ब्रह्म को प्राप्त करता है?

इन अत्यन्त स्वाभाविक और मौलिक प्रश्नों का सीधा उत्तर मायावाद के पास नहीं है। इन प्रश्नों के उत्तर देने के लिए उन्हें ऐसा विस्तृत शब्दों का जाल फैलाना पड़ता है कि मनुष्य का मन उसमें उलझकर कर्मयोग को सर्वथा भूल जाता है। यह एक निर्मूल सन्तोष में पड़ जाता है, जो उसे अकर्मण्य बना देता है। ईशोपनिषद् में जिन सिद्धान्त का प्रतिपादन है, उसका आधार यह है कि ईश्वर भी सत् है, और जगत् भी। भेद इतना है कि जहाँ ईश्वर सर्वज्ञ और अविकारी है, वहाँ जगत् विकारी और परिवर्तनशील है।

बन जा और बन गया ?

यह कल्पना कि ईश्वर ने कहा कि बन जा और बिना किसी उपादान कारण के सब कुछ बन गया, तर्क संगत नहीं है। अत्यन्त अभाव से कोई स्थूल वस्तु उत्पन्न नहीं हो सकती। भगवद्गीता २/१६ में कहा है-

नासतो विद्यते भावो नाभावो विद्यते सतः।

अत्यन्त अभाव में से भाव का उत्पन्न होना जैसा असम्भव है, विद्यमान वस्तु का अत्यन्त अभाव होना भी वैसा ही असम्भव है। जो चीज विद्यमान है, वह उत्पन्न होने से पहले किसी न किसी सूक्ष्म रूप से पहले विद्यमान थी। जैसे घड़ा मिट्टी के रूप में और मिट्टी पार्थिव अणुओं के रूप में, पहले से विद्यमान रहते हैं, वैसे ही आरम्भ में अणु मूलप्रकृति के रूप में विद्यमान रहता है।

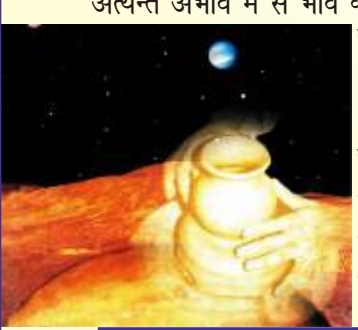

केवल ईश्वरेच्छा से, अभाव से भाव उत्पन्न हो गया इस कल्पना पर सबसे बड़ी आपत्ति यह है कि ईश्वर के मन में यह प्राकृतिक जगत् बनाने की इच्छा अकस्मात् क्यों उभर पड़ी? जो लोग ईश्वर को मानते हैं वे उसे पूर्ण और आनन्दस्वरूप भी मानते हैं, जो पूर्ण और आनन्दस्वरूप है, उसने अकारण जगत् बनाने का कष्ट क्यों उठाया? क्या अकेले में उसका जी उकता गया था, या खिलौनों से खेलने की इच्छा हुई थी? सोचें तो हम इस परिणाम पर पहुँचे बिना नहीं रह सकते कि यदि जगत् है, तो जगत् का एक चेतनकर्त्ता भी होना चाहिए, और यदि कर्त्ता है तो उपादान कारण वा मसाले की कि जिससे यह सृष्टि बनती है, विद्यमानता भी अनिवार्य है। वह उपादान कारण या मसाला प्रकृति है।

कर्त्ता और भोक्ता जीव

ईशोपनिषद् की पहली ऋचा का तीसरा पद है **'तेन त्यक्तेन भुञ्जीथा'** इसका भावार्थ यह है कि ईश्वर जगत् के अन्दर और बाहर व्याप्त है, इस कारण तुम जगत् का त्यागपूर्वक उपभोग करो। यहाँ तुम से जिसका निर्देश है, वह भोक्ता जीव है। इसी उपनिषद् की १७वीं ऋचा में जीव को क्रतो शब्द से सम्बोधन किया गया है। क्रतो का अर्थ कर्त्ता है ईश्वर भी कर्त्ता है परन्तु जीव कर्त्ता और भोक्ता दोनों हैं, यही दोनों में भेद है। कुछ विचारक जीव को ब्रह्म का अंश मानते हैं, और उसकी अलग सत्ता स्वीकार नहीं करते। वे अपने मन्तव्य का आधार **'तत्र को मोहः कः शोकऽएकत्वमनुपश्यतः'** इत्यादि उपनिषद् वाक्यों को बनाते हैं। इस ऋचा में जिस एकत्व का निर्देश है, वह मोक्षवासी की अनुभूति के सम्बन्ध में है। जो मनुष्य तत्वज्ञान को प्राप्त कर ले, उसके लिए वह पर्दा नहीं रहता, जो साधारण मनुष्यों की आँखों से ईश्वर को तिरोहित करता है, वह सर्वत्र व्यापक ईश्वर को बिना किसी व्यवधान के देख सकता है। इसका यह अभिप्राय नहीं कि उसकी अलग सत्ता ही नहीं है।

ईश्वर, आत्मा और प्रकृति में परस्पर जो सम्बन्ध है, उसका श्रुति में और उपनिषदों में अनेक स्थानों पर अलंकारिक रूप में वर्णन किया गया है। श्वेताश्वतर उपनिषद् की ऋचा है-

ज्ञाज्ञौ द्वावजावीशानीशावजा,
ह्येका भोक्तृभोग्यार्थयुक्ता।
अनन्तश्चात्मा विश्वरूपो,
ह्यकर्तात्रयं यदा विन्दते ब्रह्ममेतत्॥ १/९॥

दो चेतन हैं- एक पूर्ण ज्ञानवाला ईश, और दूसरा अल्प

ज्ञानवाला अनीश। भोक्ता के भोग के निमित्त अजा, नित्य प्रकृति है। उनमें से जो अनन्त है और जिसकी शक्ति विश्वभर में अनेक रूपों में प्रकट हो रही है, वह कर्मों का अकर्त्ता है। जो मनुष्य तीनों को भली प्रकार जान लेता है, उसने जान लिया कि ब्रह्म क्या है? श्वेताश्वतर उपनिषद् में कहा है-

द्वा सुपर्णा सयुजा सखाया समानं वृक्षं परिषस्वजाते।
तयोरन्यः पिप्पलं स्वाद्वत्त्यनश्नन्नो अभिचाकशीति ॥४/६॥

ईश्वर सृष्टि का कर्त्ता और नियन्ता है। मनुष्य कर्म करता है और उनके फल भोक्ता है। प्रकृति जगत् का उपादान कारण है। जीव उस प्रकृति की शाखा पर बैठकर फलों का स्वाद लेता, और ईश्वर के नियम के अनुसार सुख-दुःख का उपभोग करता है।

ईश्वर, जीव और प्रकृति के सम्बन्धों का ठीक-ठीक परिज्ञान वैदिक कर्मकाण्ड का आधार है। शाखा पर बैठा हुआ भोक्ता चाहे जिस फल पर चोंच मार सकता है। वह फल कच्चा भी हो सकता है, पक्का भी। वह मीठा भी हो सकता है, फीका भी। जैसे फल पर जीव रूपी पक्षी चोंच मारेगा, सृष्टि का अधिष्ठाता ईश्वर उसी के अनुसार सुख या दुःख देगा। मनुष्य को अपने कर्मों का फल अवश्य मिलेगा। देश, समय या परिस्थिति का भेद से वह कर्मफल से नहीं बच सकता, क्योंकि ईश्वर नित्य सर्वशक्तिमान और सर्वव्यापक है।

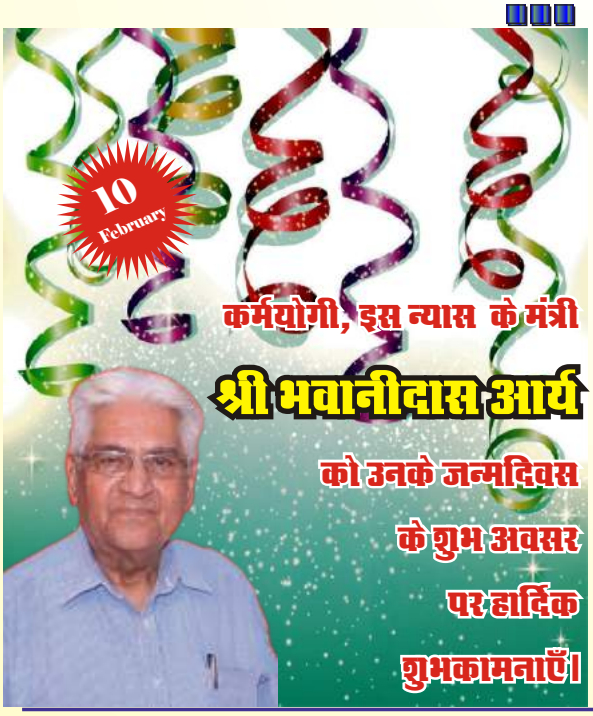

आर्यरत्न डॉ. ओमप्रकाश (म्याँमार) स्मृति पुरस्कार

"सत्यार्थ-भूषण" पुरस्कार ₹ 5100

कौन बनेगा विजेता

- न्यास की मासिक पत्रिका सत्यार्थ सौरभ का सदस्य होना आवश्यक है।
- हल की हुयी पहेली अन्तिम तिथि से पूर्व न्यास कार्यालय में पहुँचे यह सुनिश्चित करें।
- अपना सत्यार्थ सौरभ सदस्यता क्रमांक हल की हुयी पहेली के ऊपर अवश्य अंकित करें।
- लिफाफे के ऊपर 'सत्यार्थप्रकाश पहेली क्रमांक' अवश्य अंकित करें।
- आयु, लिंग, योग्यता की कोई बाधा नहीं। आबाल-वृद्ध, नर-नारी, छोटे-बड़े सभी पात्र हैं।
- विश्व भर के लोगों से सत्यार्थ सौरभ मासिक पत्रिका के अन्तर्गत 'सत्यार्थकाश पहेली' में भाग लेने का अनुरोध है।
- वर्ष भर में एक (१) के स्थान पर चार (४) पुरस्कारों के साथ ही नियमों में सकारात्मक परिवर्तन कर ऐसी व्यवस्था की गई है कि वर्ष में एक बार भाग लेने वाले/अथवा एक बार ही सफलता प्राप्त करने वाले भी पुरस्कार से वंचित न हों।
- पहेली का सही हल प्रेषित करने वाले प्रतिभागियों को ४ भागों में विभक्त किया जावेगा।
  - (अ) सम्पूर्ण वर्ष में समस्त १२ पहेलियों का शुद्ध उत्तर प्रेषित करने वाले।
  - (ब) सम्पूर्ण वर्ष में ८ से ११ पहेलियों का शुद्ध उत्तर प्रेषित करने वाले।
  - (स) सम्पूर्ण वर्ष में ५ से ७ पहेलियों का शुद्ध उत्तर प्रेषित करने वाले।
  - (द) सम्पूर्ण वर्ष में १ से ४ पहेलियों का शुद्ध उत्तर प्रेषित करने वाले।
- वर्षान्त में प्रत्येक समूह में से एक विजेता का चयन (लाट्री द्वारा) किया जाकर पुरस्कृत किया जावेगा।
- पुरस्कार राशि क्रमशः ₹५१००, ₹११००, ₹७०० तथा ₹५०० होगी। अन्य सभी नियम पूर्वानुसार।

₹5100 का पुरस्कार प्राप्त करें "सत्यार्थ सौरभ" के सदस्य बनें

अविलम्ब बहुप्रशंसित पत्रिका 'सत्यार्थ सौरभ' के सदस्य बनें, जो पहले से सदस्य हैं अपना नवीनीकरण करावें और सत्यार्थ सौरभ में छप रही 'सत्यार्थप्रकाश पहेली' में भाग लेने की पात्रता प्राप्त करें और पावें ₹5100 का पुरस्कार।

पूर्ण विवरण इसी पृष्ठ पर देखें।

अन्धन्तमः प्र विशन्ति येऽविद्यामुपासते।
ततो भूयऽइव ते तमो यऽउ विद्यायाꣳरताः॥ - यजु. ४०/१२

(ये) जो मनुष्य **(अविद्याम्)** अविद्या अर्थात् कर्म का **(उपासते)** सेवन करते हैं **(ते)** वे **(अन्धन्तमः)** अज्ञान रूपी घने अन्धकार में **(प्रविशन्ति)** प्रवेश करते हैं **(ये उ)** और जो मनुष्य **(विद्यमान्)** विद्या अर्थात् ज्ञान में **(रताः)** रत हैं, **(ते)** वे मनुष्य **(ततः उ)** उससे भी **(भूयः इव)** और अधिक **(तमः)** घोर अन्धकार में **(प्रविशन्ति)** प्रवेश करते हैं।

अन्यदेवाहुर्विद्यायाऽअन्यदाहुरविद्यायाः।
इति शुश्रुम धीराणां ये नस्तद्विचचक्षिरे। - यजु. ४०/१३

(विद्यायां) ज्ञान का **(अन्यत् एव)** दूसरा ही फल **(आहुः)** कहते हैं। **(अविद्यायाः)** कर्म का **(अन्यत् एव)** दूसरा ही फल **(आहुः)** कहते हैं **(इति)** ऐसा हम

विद्या और अविद्या

(धीराणाम्) धीर पुरुषों अर्थात् विद्वानों से **(सुश्रुम)** सुनते आ रहे हैं **(ये)** जिन्होंने **(नः)** हमारे लिए **(तत्)** उसका **(विचचक्षिरे)** उपदेश किया है।

विद्यां चाविद्यां च यस्तद्वेदोभयꣳसह।
अविद्याया मृत्युं तीर्त्वा विद्ययाऽमृतमश्नुते॥ - यजु. ४०/१४

(य) जो मनुष्य **(विद्यां च)** ज्ञान **(अविद्यां च)** और कर्म **(तत् उभयम्)** उन दोनों को **(सह)** साथ-साथ **(वेद)** जान लेता है वह **(अविद्यया)** कर्म से **(मृत्यु)** को **(तीर्त्वा)** पार करके **(विद्यया)** ज्ञान से **(अमृतम्)** अमृत अर्थात् अमरता को **(अश्नुते)** प्राप्त करता है।

इन वेद मंत्रों में विद्या और अविद्या का अत्यन्त महत्वपूर्ण शब्दों में वर्णन किया गया है। विद्या ज्ञान को कहते हैं, यह तो निर्विवाद ही है। अविद्या के दो अर्थ किए जाते हैं- एक पारिभाषिक और दूसरा यौगिक। दर्शनों में प्रायः अविद्या का पारिभाषिक अर्थ 'मिथ्याज्ञान' लिया जाता है। परन्तु अविद्या का यौगिक अर्थ है- 'विद्या से भिन्न'। जो विद्या (ज्ञान) नहीं है फिर वह क्या है? इसका उत्तर है- 'कर्म'। 'क्योंकि आत्मा के स्वाभाविक गुण 'ज्ञान और कर्म' ही हैं। शरीर की बनावट भी आत्मा के स्वाभाविक गुणों की साक्षी है। शरीर में दो ही प्रकार की इन्द्रियाँ हैं-

ज्ञानेन्द्रियाँ और कर्मेन्द्रियाँ। ज्ञानेन्द्रियाँ आत्मा के ज्ञान और कर्मेन्द्रियाँ आत्मा के कर्म गुण को सार्थक करने के लिए हैं।

अब वेद के इस विद्या-अविद्या का अर्थ भी साफ हो गया कि केवल ज्ञान का या केवल कर्म का सेवन करना अन्धकार में पड़ना है। सिद्धान्त यह है कि ज्ञान और कर्म का प्रयोग साथ साथ करना चाहिए। ज्ञान प्राप्त करके उसको कर्म में परिणत करना ही मनुष्य जीवन का सबसे बड़ा उद्देश्य है। जिससे वह कर्म के बन्धन से मुक्त होकर अमरता प्राप्त कर सके।

अतः वेद कहता है कि जो केवल ज्ञान का सेवन करते हैं, वह उनसे अधिक अन्धकार में पड़ते हैं, जो केवल कर्म का ही आश्रय लेते हैं। क्योंकि ज्ञान मात्र का कोई फल नहीं मिलता। परन्तु कर्म जितना भी करेगा चाहे वह कितना ही उल्टा सीधा क्यों न हो, उसका कुछ न कुछ फल अवश्य मिलेगा। इसलिए वेद की शिक्षा में कर्म का बहुत ऊँचा स्थान है। यह बात कभी किसी आध्यात्म विद्या के विद्यार्थी को नहीं भूलनी चाहिए।

परन्तु वास्तविकता यह है कि कर्म के यथार्थ रहस्य को समझने में बड़े-बड़े बुद्धिमान् भी भूल कर बैठते हैं। इसलिए कर्म के वास्तविक रहस्य से अनभिज्ञ सूक्ष्मज्ञान का अभिमान

करने वाले मनुष्य कर्म को ब्रह्मज्ञान में बाधा समझाते हुए अपने अवश्यमेव कर्त्तव्य-कर्मों का परित्याग कर देते हैं, परन्तु इस प्रकार के परित्याग से उन्हें त्याग का फल अर्थात्-कर्मबन्धन से छुटकारा नहीं मिलता है।

अतः जो मनुष्य कर्म और ज्ञान के व्यापक तत्व को एक साथ समझ कर शास्त्र विहित कर्मों का परित्याग नहीं करता अपितु कर्तव्य के अभिमान, राग-द्वेष एवं फल कामना से रहित हो उनका यथाविधि आचरण करता है, उसकी जीवन यात्रा सुख एवं आनन्द पूर्वक निर्विघ्न व्यतीत होती है और कर्मानुष्ठान विधिवत् करने के फल-स्वरूप उसका अन्तस्तल समस्त दुर्गुणों एवं मोह शोकादि विकारों से रहित होकर विशुद्ध निर्मल हो जाता है और उस परब्रह्म परमात्मा की असीम कृपा से वह इस संसार सागर से सहज में ही तर जाता है। अन्त में परम मोक्षधाम को प्राप्त कर सर्वान्तर्यामी ब्रह्म में लीन हो जाता है।

भाव यह हैं कि मनुष्य विद्या और अविद्या अर्थात् ज्ञान और कर्म इन दोनों के व्यापक रहस्य को साथ-साथ जानकर शास्त्र विहित कर्मानुष्ठानों को करते हुए संसार रूपी सागर से सहज में ही तर जाता है और विद्या (ज्ञान) से अमरत्व को प्राप्त कर लेता है।

इस प्रकार विद्या और अविद्या के रहस्य को जान लेने के पश्चात् इससे भिन्न मनुष्य जीवन का और कोई भी ऐसा कर्तव्यकर्म जो इसके कल्याण के लिए अपेक्षित हो, बाकी नहीं रहता।

विश्व भर से आने वाले पर्यटकों के नवलखा महल, उदयपुर के बारे में विचार

आज दिनांक २८ दिसम्बर २०२१ को परिवार सहित नवलखा महल में आना हुआ। देखकर बहुत प्रसन्नता हुई कि महर्षि दयानन्द की जीवनी और सामाजिक कार्यों को आर्ट गैलरी में बहुत ही सुन्दर तरीके से प्रस्तुत किया गया है। दयानन्द दर्शन फिल्म को भी देखा। बहुत ही अच्छी अनुभूति हुई और महर्षि दयानन्द के कार्यों और जीवनी को जानने का अवसर प्राप्त हुआ। न्यास प्रबन्धन को इस सुन्दर कार्य एवं साज-सज्जा के लिए साधुवाद एवं धन्यवाद।

-सत्य प्रकाश भारद्वाज, मंत्री-आर्य समाज, फरीदाबाद

आज हमने नवलखा महल, गुलाब बाग, उदयपुर में यहाँ के बहुत ही सुन्दर आर्ट गैलरी को देखा। इस चित्रदीर्घा के माध्यम से हम लोगों ने आर्य समाज से जुड़े अनछुए पहलुओं व महापुरुषों के बारे में जानकारी प्राप्त की। स्वतंत्रता सेनानी व रामायण से सम्बन्धित ज्ञान भी प्राप्त किया। बहुत सारी ऐसी जानकारी हमें प्राप्त हुई जो जिसके बारे में हम आज तक भ्रम में ही पड़े हुए थे। बहुत ही आनन्द की अनुभूति हो रही है और हम आज यहाँ से बहुत सारी ऐसी जानकारी, ऐसा ज्ञान प्राप्त करके जा रहे हैं जो ज्ञान हमारे लिए बहुत ही महत्वपूर्ण है। यहाँ के गाइड का भी हम हृदय से धन्यवाद करते हैं उन्होंने हमें अच्छी जानकारी दी।

- माधव सिंह, अलीगढ़ (उत्तर प्रदेश)

यहाँ नवलखा महल, गुलाब बाग, उदयपुर की गैलरी में आया तो बिना मन से था लेकिन जैसे ही अन्दर प्रवेश किया तो अद्भुत गैलरी थी। ऐसा रहस्य जो हम नहीं जानते थे उसके बारे में जानकारी प्राप्त हुई। सत्यार्थ प्रकाश और महर्षि दयानन्द सरस्वती, रामायण, महाभारत एवं क्रान्तिकारियों के बारे में अद्भुत एवं सत्य ज्ञान प्राप्त करना हो तो इस आर्ट गैलरी में आना अनिवार्य है। यहाँ मानव जीवन के सोलह संस्कार का चित्रण भी अद्भुत है। बहुत-बहुत आभार बहुत-बहुत धन्यवाद।

- गजानन्द यादव, जयपुर

इसके पूर्व कि हम वेद विषयक प्राचीन सर्व शास्त्र सम्मत सिद्धान्त का युक्तियुक्त अर्वाचीन निष्पक्ष विद्वानों द्वारा समर्थित विवेचन प्रारम्भ करें, हम मध्यकालीन विद्वानों की कुछ भयंकर भूलों का निर्देश करना आवश्यक समझते हैं, जिनके कारण ही अनेक पाश्चात्य विद्वानों और उनके भारतीय अनुयायियों ने वेदों के विषय में वे भ्रांत धारणाएँ बनाई जिनका इस ग्रन्थ में सप्रमाण विवेचन और निराकरण किया जाएगा। उनमें से कुछ प्रमुख भूलें निम्न हैं।

❸ वेदों से तात्पर्य ऋग्वेद, यजुर्वेद, सामवेद और अथर्ववेद इन चार मंत्र संहिताओं का ही नाम लेकर ब्राह्मण ग्रन्थों और उपनिषदों को भी जो स्पष्टतया ऋषिकृत हैं (ईश उपनिषद के कुछ मंत्रों को छोड़कर जो यजुर्वेद के ४०वें अध्याय से लिए गए हैं) उन्होंने वेदों में सम्मिलित कर लिया। वस्तुतः ब्राह्मण ग्रन्थ ब्रह्म अर्थात् वेद के व्याख्यान रूप हैं जिनमें अनेक ऋषियों के इतिहास भी पाए जाते हैं। उपनिषदें, वेदों और अपने अनुभव के आधार पर ऋषियों द्वारा निर्मित हैं जिनमें वेदों को स्वयं परमेश्वर का वचन और निःश्वास रूप माना गया है, जैसे कि पहले उद्धरण देकर बताया जा चुका है।

❷ यद्यपि श्री सायणाचार्य आदि भाष्यकार भी वेदों को नित्य और अपौरुषेय मानते हैं जैसे कि-

तस्माद पौरुषेयत्वान्नित्यत्वाच्च कृत्स्नस्यापि वेदाराशेः (अथर्व भाष्योपोद्घाते) तथा

यस्य निःश्वसितं वेदाः, यो वेदोभ्योखिलं
जगतनिर्ममे तमहं वन्दे विद्यातीर्थमहेश्वरं

❸ इत्यादि प्रत्येक वेदभाष्य के प्रारम्भ में लिखे श्लोकों से स्पष्टतया ज्ञात होता है तथापि वह वेदों में ऋषियों और राजाओं का अनित्य इतिहास मानते तथा उनके आधार पर वेद मंत्रों की व्याख्या करते हैं। इतना ही नहीं वे ऐसी अनेक असंगत आख्यायिकाऐं लिखते हैं, जिन्हें पढ़कर किसी भी विचारशील व्यक्ति को लज्जित होना पड़ता है। ऋषियों को ही इन्होंने मंत्रों का कर्त्ता समझ लिया वेदों के ऋग्वेद

❸ एकं सद्विप्रा बहुधा वदन्त्यग्निं यमं मातरिश्वानमाहुः।।

- ऋग्वेद १/१६४/४६ तथा

य एक इत्तमु ष्टुहि कृष्टीनां विचर्षणिः। पतिर्जज्ञे वृषक्रतुः।

- ऋग्वेद ६/४५/१६

इत्यादि सैकड़ों मंत्रों के होते हुए भी जिनमें स्पष्टतया एकेश्वरवाद का प्रतिपादन किया गया है सैकड़ों देवी-देवताओं की पूजा का विधान इन मध्यकालीन आचार्य और वेद भाष्यकारों ने अपने ग्रन्थों में किया जो वस्तुतः सर्वथा वैदिक शिक्षा के विरुद्ध था। इस विषय पर आगे कुछ विस्तार से सप्रमाण विवेचन किया जाएगा। वेदों के ऋग्वेद

अग्ने यं यज्ञमध्वरं विश्वतः परिभूरसि। स इद्देवेषु गच्छति।।

- ऋग्वेद १/१/४

देवो देवानामसि मित्रो अद्भुतो वसुर्वसूनामसि चारुरध्वरे।
शर्मन्त्स्याम तव सप्रथस्तमेऽग्ने सख्ये मा रिषामा वयं तव।।

- ऋग्वेद १/९४/१३

भद्रो नो अग्निराहुतो भद्रा रातिः सुभग भद्रो अध्वरः।
भद्रा उत प्रशस्तयः।। - ऋग्वेद ८/१९/१९

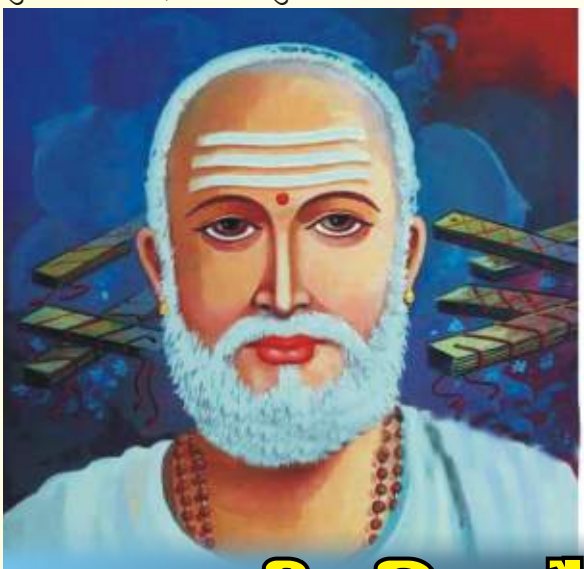

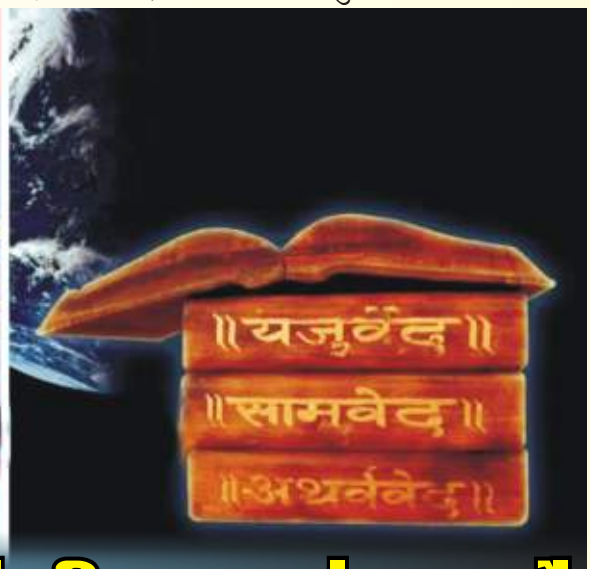

मध्यकालीन विद्वानों की कुछ भयंकर भूलें

इत्यादि सैकड़ों मंत्रों के होते हुए भी जिनमें यज्ञ को अध्वर के नाम से पुकारा गया है और जिसका अर्थ निरुक्तकार श्री यास्काचार्य ने

अध्वर इति यज्ञनामध्वरतिर्हिंसा कर्मा तत्प्रतिषेधः।

– निरुक्त १/७

व्युत्पत्ति के आधार पर हिंसा रहित शुभ कर्म किया है। इन मध्यकालीन प्रायः सभी आचार्यों ने यज्ञ में बकरों, घोड़ों, गौओं, बैलों तथा अन्य प्राणियों यहाँ तक कि मनुष्य तक की हिंसा को शास्त्रविहित और स्वर्गरूपपुण्य प्राप्ति जनक बताया जिससे महात्मा बुद्ध आदि को इन पशु हिंसात्मक यज्ञों के विरुद्ध प्रबल आन्दोलन करना पड़ा, चार्वाक जैसे नास्तिक मतों की उत्पत्ति में भी वेद विषयक अशुद्ध विचारों ने सहायता प्रदान की इसमें सन्देह नहीं।

❹

यथेमाँ वाचं कल्याणीमावदानि जनेभ्यः। – यजु. २६/२

पंच जना मम होत्रं जुषध्वम्। – ऋग्वेद १०/५३/४

समानं मन्त्रमभि मन्त्रये वः। – ऋग्वेद १०/१९१/३

इत्यादि सैकड़ों मंत्रों के होते हुए भी जिनमें वेदों को पढ़ने और यज्ञादि करने का अधिकार सब मनुष्यमात्र को दिया गया है, इन मध्यकालीन अनेक आचार्यों ने शूद्र कुलोत्पन्न समस्त पुरुषों और सब स्त्रियों को उस अधिकार और कर्तव्य से वंचित रखा जिससे वे अज्ञान के गर्त में गिरते ही चले गए तथा पाखण्ड की वृद्धि हुई।

❺ उनके अनुसार मूल वेदों में केवल कर्मकाण्ड का प्रतिपादन है न कि ज्ञान कर्म और उपासना के समुच्चय का। उनकी व्याख्या के अनुसार जो उनके समय में प्रचलित पौराणिक और तांत्रिक विश्वासों तथा रीति-रिवाजों से अनेक अंशों में प्रभावित हुई, वेदों के अन्दर अग्नि, इन्द्र, मित्र, वरुण, सरस्वती, रुद्र, मरुतः इत्यादि की स्तुतियाँ तथा उनसे प्रार्थनाएँ ही पाई जाती हैं। जीवन उपयोगी तत्व और सदाचार तथा मानव कर्तव्य प्रतिपादक उपदेशों का उनमें अभाव सा है। देवी-देवताओं के चरित्र भी प्रायः अत्यन्त हीन हैं। माँस, मद्य, द्यूत सेवन, जादू-टोने आदि से वेदों के अनेक अंश भरे पड़े हैं। वस्तुतः यह धारणाएँ सर्वथा अशुद्ध हैं। बहुत से पाश्चात्य विद्वानों ने इन्हीं मध्यकालीन वेदभाष्यों का अधिकतर अनुसरण किया और अपनी पक्षपातपूर्ण कल्पनाओं को भी ईसाई मत की श्रेष्ठता प्रतिपादन करने के लिए इनके साथ जोड़ लिया जिससे वे वेदों के यथार्थ विशुद्ध रूप समझने में असमर्थ हो गए और अन्य को भी मार्ग भ्रष्ट करने का कारण बने। यह मध्यकालीन सायणाचार्य आदि व्याकरण आदि के विद्वान् होते हुए भी योगी वा ऋषि न थे और न इन्हें वेदान्तर्गत विविध विद्याओं का ज्ञान था अतः-

न ह्येशु। – निरुक्त १/४ पृष्ठ २३

इस वचन के अनुसार कि जो ऋषि और तपस्वी नहीं वह इन वेद मंत्रों के अर्थ का साक्षात्कार नहीं कर सकता, वेद पढ़ने वालों में जो जितना अधिक विविध विद्याओं के जानने वाला होता है उतना ही वह प्रशंसनीय होता और वेदों के वास्तविक अर्थ को समझने में समर्थ होता है, यह लोग वेदों के रहस्य को समझने में प्रायः असमर्थ रहे और कई स्थानों पर ऐसे अश्लील तथा भ्रष्ट अर्थ करके वेदों को कलंकित कर गए कि उनको पढ़ते हुए भी सिर लज्जा के मारे झुक जाता है।

– पण्डित धर्मदेव विद्यामार्तण्ड

(वेदों का यथार्थ स्वरुप से साभार)

श्रीमद् दयानन्द जयन्ती पर विशेष

संयुक्त परिवार बरगद की छाँव

जब मैं घर से ऑफिस के लिए निकलता हूँ तो, रास्ते में मोड़ पर एक बरगद का पेड़ पड़ता है, लगता है बरगद का पेड़ कहता है मुझसे कुछ, बरगद के पेड़ जैसे-जैसे पुराना होता है, ठीक वैसे-वैसे उसकी जड़ काफी मजबूत और छाँव की सीमा फैलती जाती है।

ये बरगद का पेड़ देखने पर मुझे अतीत का संयुक्त परिवार याद दिलाता है, वही संयुक्त परिवार जिसमें परिवार का सबसे बड़ा सदस्य एक बरगद के पेड़ की तरह होता है, जैसे-जैसे परिवार बढ़ता जाता है, उस बरगद रूपी परिवार के मुखिया की छाया भी परिजनों पर बढ़ती जाती थी और अनुभव रूपी जड़ परिवार का आधार बन मजबूती से बाँधे रहता था।

सच कहूँ तो आज के दौर में कई एकल परिवार को देखता हूँ तो मन व्यथित हो उठता है कि ना इस परिवार को अनुभव से परिपूर्ण बड़ों की छाँव मिल पाती है ना ही समाज से कटने के कारण इन्हें कृष्ण जैसा कोई दोस्त, जो सारथि बन पथ के हर पग पर उचित कर्म का बोध कराये। माना आज के अर्थवादी युग में परिवार के सभी सदस्यों का स्व-आश्रित होना बहुत जरूरी है (मेरा खुद का मानना है होना भी चाहिए, क्योंकि स्थिति और हालत कब और कैसे हो जाए कुछ कहा नहीं जा सकता) लेकिन क्या गाड़ी (परिवार रूपी गाड़ी) के दोनों पहिया (पति-पत्नी) इस अर्थरूपी दुनिया में दौड़ने के लिए गाड़ी की स्टेरिंग (परिवार के मुखिया) की जरुरत नहीं पड़ेगी? पड़ेगी, जरूर पड़ेगी। मैं अपने कई दोस्तों को देखता हूँ कि पति-पत्नी दोनों सुबह-सुबह रोजी-रोटी के जुगाड़ में घर से निकल लेते हैं और उनका नन्हा सा बालक एक अनजान आया (काम वाली बाई) के पास रहता है, क्या वह आया (कुछ को छोड़ कर) वो संस्कार दे पायेगी जो दादा-दादी और नाना-नानी से मिलता था? मेरे अनुभव के आधार पर बिल्कुल नहीं।

माना आज की मूल जरूरतें और बच्चों की महंगी होती उच्च शिक्षा को पूरा करने के लिए पति-पत्नी दोनों का रोजगार परक होना बहुत जरूरी है लेकिन इस भाग-दौड़ भरी जिन्दगी में उस नन्हें बालक को दादा-दादी और नाना-नानी के प्यार से वंचित करना क्या उचित हैं? हम अपने साथ कभी ससुराल पक्ष तो, कभी मायका पक्ष के वरिष्ठजनों को अपने पास रख सकते हैं, जिससे वो हमारी सन्तान को उचित परिवेश और संस्कार दे सकें, और उनकी वृद्धावस्था भी उनके नाती-पोते के साथ आनन्दमय तरीके से बीत सके और परिवार के वरिष्ठजनों के चहेरे पर मधुर मुस्कान भी बनी रहे।

मेरा मानना है जैसे बरगद की जड़ जमीन की तरफ ही जाती है वैसे इंसान को भी अपने आने वाली पीढ़ियों को अपने पैतृक स्थान से जोड़ कर रखना चाहिए और उनका परिचय और मिलाप वहाँ के लोगों से कराते रहना चाहिए।

खुद के अनुभव से कह सकता हूँ कि इस अर्थ रूपी युग में जितना हो सके अपने सारथी रूपी मित्र कृष्ण और सगे-सम्बन्धियों के लिए भी समय निकालना चाहिए, क्योंकि जरुरत और समय पर यही काम आते हैं। मैं अपने मित्र रामभरत (काल्पनिक नाम) को देख रहा हूँ, मित्र रामभरत एक उच्च शिक्षा के बाद एक मल्टीनेशनल कम्पनी में कार्यरत हैं। और एक दिन रामभरत की तबियत अचानक खराब हो जाती है और डॉक्टर उन्हें इलाज के लिए बड़े महानगर में जाने की लिए सलाह देते हैं। रामभरत के पास पैसे की कोई कमी नहीं है, कमी है तो बस अपनों की। रामभरत ने अपनी जिन्दगी बस पैसे कमाने में बिता दिया ना कभी अपने मित्रों, रिश्तेदारों से मिलना उचित समझा ना ही कभी फोन करके हाल-चाल लेना जरुरी समझा।

इसलिए बरगद रूपी पेड़ की तरह अपने अभिभावक के अनुभव का खुद फायदा उठायें उनके अनुभवों का संचार अपने बालकों में भी संचरित होने दीजिए और किसी बहाने, चाहे कोई कार्यक्रम, चाहे कोई त्यौहार हो अपने सगे-सम्बन्धी को अपने होने का भी अहसास कराते रहिये। अपने आपको रामभरत मत बनने दीजिए, याद रखिये साल २०११ के एक रिपोर्ट के अनुसार देश में हर ४ मिनट में कोई एक नागरिक खुदकुशी कर लेता है और ऐसा करने वाले तीन लोगों में से एक युवा होता है यानि देश में हर १२ मिनट में ३० वर्ष से कम आयु का एक युवा अपनी जान ले लेता है। ऐसा कहना है राष्ट्रीय अपराध रिकार्ड ब्यूरो का।

परिवार और नाते-रिश्तों का महत्व समझिए, ये मत भूलिए कि कोरोना जैसे महामारी में बड़े-बड़े महानगरों में बड़े-बड़े साहब को भी उनके छोटे से गाँव ने ही पनाह दिया ।

- अंकुर सिंह
हरदासीपुर, चंदवक, जौनपुर- २२२१२९ (उत्तरप्रदेश)

जितने भी प्राकृतिक संसाधन हैं, उन सबका सर्वप्रथम नामकरण भारत के ऋषि मुनियों ने ही किया था।

यूरोपियन व मुगलों ने उस महान् संस्कृति एवं विकसित सभ्यताओं को सांप्रदायिकता की संकुचित सोच के कारण भारी क्षति पहुँचाई है। जिसके कारण न केवल उन क्रूर लोगों के वंशज बल्कि वर्तमान व भविष्य की पीढ़ियाँ भी अपने गौरवशाली पूर्वजों के इतिहास, आचार-विचार, विज्ञान और प्रकृति प्रेम से वंचित हो रहे हैं। ऐसा अन्याय करने पर न तो उन प्रवर्तकों को कोई लाभ मिला है और न उनके अनुयायियों को ही मिल सकेगा।

यह धरती सबकी है, इसमें एक वर्ग विशेष को महत्व दिलाने के लिए इतिहास से छेड़-छाड़ करना सम्पूर्ण मानव जाति के

साथ अन्याय है। संसार की नई पीढ़ी को अपने पूर्वजों के बारे में सही जानकारी पाने का अधिकार है।

मेरी यह स्पष्ट मान्यता है कि विश्व के हर कोने में सर्वप्रथम वेदोक्त विचारधारा वाले लोग ही बसते थे। जितने भी प्राकृतिक संसाधन हैं, उन सबका सर्वप्रथम नामकरण भारत के ऋषि मुनियों ने ही किया था। उनके द्वारा किये गये नामकरण का आधार जहाँ नदी, पर्वत व जंगलों की विशेषताओं पर अवलंबित था वहीं किसी महान् विभूति के नित्य इतिहास को भी प्रदर्शित करता था। सृष्टि के आरम्भ से लेकर महाभारत काल तक न कोई संप्रदाय था और न ही कोई आत्ममुग्ध प्रवर्तक था। केवल-केवल एक ही निराकार ब्रह्म (ओ३म्) के उपासक एवं परम प्रमाण स्वरूप एक ही ज्ञान स्रोत (वेद) के अनुरूप सम्पूर्ण भूमण्डल के क्रियाकलाप संचालित थे।

यूरोपियन व मुगलों ने विकसित सभ्यताओं को सांप्रदायिकता की संकुचित सोच के कारण भारी क्षति पहुँचाई है।

जो अब धरती पर नहीं हैं, जिनकी मृत्यु हो गई है, उन्हें अपने बाद चलने वाले सम्प्रदाय से कुछ भी लाभ नहीं मिल सकता! किन्तु उनके द्वारा प्रसिद्ध हुई नई-नई कल्पनाओं ने करोड़ों लोगों को भ्रमजाल में फंसाकर मानवता का शत्रु बना दिया है। जिनके दोषियों के कारण करोड़ों निरपराध लोग काल-कवलित हुए। इन हत्याओं के लिए उत्तरदायी प्रवर्तकों के पाप उन्हें कई जन्मों तक सुख व शान्ति से जीने नहीं देंगे। यह भी कहा जा सकता है कि उन प्रवर्तकों के नाम व शिक्षा की आड़ लेकर विश्व की जिन जन-जातियों की संस्कृति, समृद्धि एवं समाज व्यवस्था को क्षति पहुँची, इसके लिए उत्तरदायी पापी लोग कभी भी स्वर्ग (सुख) नहीं पा सकेंगे।

इस धरा पर सबसे पहले रहने वाले, पर्यावरण व प्रकृति के सच्चे सेवक तथा करोड़ों वर्ष तक सम्पूर्ण विश्व के चक्रवर्ती राजा रहे आर्यों का इतिहास क्यों मिटाया जाता रहा है?

अब नयी पीढ़ी के लिए एक चुनौती है कि वह विश्व की सर्वप्रथम प्रचलित रही मूल संस्कृति एवं अपने पूर्वजों के वास्तविक इतिहास को जानने के लिए समस्त विश्वसनीय तकनीकों का सहारा लेकर विश्व के वास्तविक इतिहास को पुनः खोजें और सम्पूर्ण मानव जाति के हित के लिए उसे निष्पक्षता से प्रकाशित करें।

किसी भी सभ्यता की पहचान मिटाने के क्रम में एक छोटा सा उदाहरण हम देख सकते हैं कि अमेरिका के एक राज्य का नाम वर्जीनिया रखा गया, यह नाम ४१४ वर्ष पहले पैदा हुई एक यूरोपीयन अंग्रेज की लड़की के नाम पर था। इस पहली संतान के नाम को इतना महत्व देना कि वर्जीनिया क्षेत्र के पुराने नाम को ही भुला दिया गया! जो लोग कर्नल जेम्स से पहले अमेरिका में बसते थे उनको महत्वहीन कर देने की जो प्रथा यूरोपियनों ने आरम्भ की वही प्रथा कालान्तर में मुगलों ने भी अपनाई।

ये लोग न तो किसी भूभाग, पहाड़, पर्वत या नदी का नाम बदलने में हिचकिचाये और न ही इन्होंने मानव सभ्यताओं के इतिहास मिटाने में कोई कसर छोड़ी! जहाँ इनकी धूर्तता या तलवार नहीं चली वहाँ इन्होंने अन्य सभ्यता-संस्कृति के गुणवान एवं पराक्रमी नायक नायिकाओं को काल्पनिक बताना आरम्भ कर दिया।

यूरोपियनों ने एक ऐसी ठेकेदारी आरम्भ कर दी थी कि वे जिस क्षेत्र, जाति व संस्कृति का नाम बदलना चाहते, बदल डालते थे। अपने आप को उच्च दर्जे का सिद्ध करने के इनके अभियान ने विश्व के सभी वैज्ञानिक आविष्कारों पर अपनी मुहर लगाना आरम्भ कर दिया था। जो धरती को चपटी बताते एवं सूरज को धरती का चक्कर लगाने वाला पिण्ड मानते थे, जो स्त्री में आत्मा न मानने वाले और स्त्री को पैरों की जूती कहते थे। वे बड़ी चालाकी से विश्व भर में आर्यों के इतिहास को मिटाते रहे। उसमें कुछ मूर्ख लोग ऐसे भी थे जो सूर्य को एक झरने से निकलने वाला अक्स मानते थे। ये लोग स्वयं को वैज्ञानिक एवं बाकी सबको जंगली कहने लगे।

इन्होंने उन प्रकृति प्रेमी आर्यों के वैभव को दुनिया के सामने नहीं रखा, जो उस काल तक भी कई अट्टालिकाओं वाले घरों में रहते थे, सोने चांदी, हीरे-जवाहरात के आभूषण पहनते थे। जिनकी परिवार एवं समाज व्यवस्था अत्यन्त बेजोड़ थी। जहाँ की न्याय व्यवस्था, राजनीति, सामुद्रिक-आकाशीय एवं भूगर्भ विद्या का कोई सानी नहीं था। आश्चर्य की बात तो ये है कि तब जो लोग जंगलों में अपना शरीर ढकने के लिए पेड़ों की छाल ढूँढते थे या कच्चा माँस चबाते थे। वे लोग सोने की चिड़िया समृद्ध भारत को सपेरों का देश तथा वेदों को गड़रिए का गीत बताकर अपनी आत्म-प्रशंसा करा रहे थे। इस प्रकार के विचारों की उधेड़बुन में चलते हुए मैं पोटामक नदी के किनारे आ पहुँचा।

यह नदी वर्जीनिया मैरिलैण्ड एवं वाशिंगटन डीसी के लिए अत्यन्त महत्वपूर्ण है। डीसी आने वाले अधिकांश पर्यटक इसे

बिना देखे या इसमें नौकायन किए बिना नहीं जाते हैं। सुबह-शाम के समय इस नदी के दोनों ओर की ट्रेल पर सैकड़ों लोग दौड़ लगाते व टहलते हैं। इस नदी का ऐतिहासिक महत्व क्या रहा होगा, इस क्षेत्र में ४०० वर्ष पहले जो लोग रहते थे, उनके रीति-नीति, धार्मिक एवं सामाजिक मूल्य किस प्रकार के रहे होंगे, वे जातियाँ अब कहाँ हैं? इस प्रकार के अनेक प्रश्न मेरे मस्तिष्क में कौंध रहे थे। सुना है कि अफरीकी मूल के नर-नारियों को दास बनाकर लाने वाले यूरोपियनों के जहाज इसी नदी में ठहरते थे। उन मजबूर लोगों को जार्जटॉउन के इसी क्षेत्र में रखते व उनसे कठोर से कठोर काम कराते थे।

१७वीं शताब्दी में यूरोपियनों ने अमेरिका के अनेक क्षेत्रों के नाम बदलकर या पुराने नामों की उपेक्षा कर अंग्रेजी नाम रखे। इस बात की पुष्टि इससे भी की जा सकती है कि-

१. पोटोमैक नदी और २. जार्जटॉउन नाम भी यूरोपियन हैं।

{लेखक डॉ. मोक्षराज संस्कृत, वेद एवं हिन्दी भाषा के विद्वान् और योगगुरु हैं। वह भारतीय राजदूतावास, वॉशिंगटन डीसी, अमेरिका में (२०१८-२०२०) भारतीय संस्कृति के शिक्षक थे। इसके अलावा उन्होंने योग के माध्यम से हजारों लोगों को शिक्षित किया।}

ईश्वर जीवात्माओं को सुधार के अवसर निरन्तर देता रहता है

मनमोहन कुमार आर्य

हमारा स्वभाव ऐसा है कि जो लोग हमसे जुड़े हैं वे सभी हमारे अनुकूल हों और हमारी अपेक्षाओं को पूरा करें। यदि कोई हमारे अनुकूल नहीं होता व अपेक्षायें पूरी नहीं करता तो प्रायः हम उससे दूरी बना लेते हैं। ऐसे ही कारणों से पति व पत्नी के सम्बन्ध तक टूट जाते हैं व मित्र आपस में मित्र नहीं रहते। मनुष्य दूसरों से जो व्यवहार करता है वह सत्य व असत्य से युक्त होता है। असत्य व्यवहार पापरूप व्यवहार होता है जिसका सर्वव्यापक तथा जीवों के कर्मों का साक्षी परमात्मा यथायोग्य दण्ड देता है। हमारा ईश्वर जगत् का रचयिता, पालक व स्वामी है। वह सर्वव्यापक, सर्वद्रष्टा, सर्वज्ञानमय, सर्वशक्तिमान और सर्वान्तर्यामी चेतन सत्ता है। जीवात्मायें एकदेशी, अल्पज्ञ, ससीम, सूक्ष्म एवं एक बिन्दु के समान व उससे भी कहीं सूक्ष्म चेतन सत्तायें हैं जिनका आकार व प्रकार इतना सूक्ष्म है कि उन्हें आँखों से देखा नहीं जा सकता। ईश्वर अनादि, अजन्मा व नित्य है और इसी प्रकार सभी जीवात्मायें भी हैं। जीवात्माओं को सुख प्रदान करने के लिए ही ईश्वर ने अपने नित्य ज्ञान, सर्वज्ञता व सर्वशक्तिमत्ता से इस ब्रह्माण्ड को बनाया है। ईश्वर ने यह ब्रह्माण्ड और इसके नियम ऐसे बनाये हैं कि इससे अच्छा ब्रह्माण्ड और नियम बन ही नहीं सकते थे।

कर्मानुसार जीवों की भी अनेकानेक श्रेणियाँ होती हैं। कुछ के पूर्व कर्मों का खाता बहुत अच्छा होता है तो कुछ का मध्यम वा सामान्य और कुछ व अधिकों का बुरा भी। इन सब जीवों को ईश्वर उनके कर्मानुसार सुख व दुःख का विधान करता है। हमारे ऋषि मुनियों ने अपनी पवित्र सूक्ष्म बुद्धि से जाना कि मनुष्य के यदि शुभ व अशुभ कर्म बराबर हों तो उन्हें अगला जन्म मनुष्य योनि में मिला करता है। यदि अशुभ व पाप अधिक हों व पुण्य कम, तो मनुष्येतर पशु, पक्षी, कीट, पतंग आदि की योनियाँ मिलती हैं जहाँ उन अशुभ कर्मों का फल भोग कर शुभ व अशुभ कर्मों का खाता बराबर व समान होने पर पुनः मनुष्य जीवन मिलता है। जीवात्माओं को दण्ड का विधान अर्थात् कर्मानुसार सुख-दुःख का भोग मनुष्य को शुभ कर्मों को करके उन्नति करने के उद्देश्य से ईश्वर ने किया है। कई लोगों को कर्मानुसार व परिस्थितियोंवश अच्छा परिवेश व वातावरण मिलता है तो वह वेद विहित ईश्वरेच्छा के अनुसार अच्छे

कर्म कर उन्नति को प्राप्त होते हैं। जो पुरुषार्थ न कर विद्या प्राप्ति में शिथिलता करते हैं और वेद निषिद्ध कर्मों को करके द्रव्य, धन, ऐश्वर्य आदि को प्राप्त कर सुख भोगते हैं, वह कर्म फल बन्धन में फंसते हैं जिसका फल उन्हें शेष जीवन और मृत्यु के बाद के जन्मों में ईश्वर की व्यवस्था के अनुसार भोगना पड़ता है।

ईश्वर एक सच्चे न्यायाधीश के समान है। वह अकारण किसी को सजा व कष्ट देना नहीं चाहता परन्तु वह अपने विधि विधान को भी नहीं छोड़ सकता। यदि किसी जीवात्मा वा मनुष्य ने अच्छा कर्म किया है तो उसे उसके अच्छे कर्म के बदले में सुख की प्राप्ति होगी। यदि वह निष्काम भाव से कर्म करता है तो वह कर्म उसके पुण्य कर्मों में संग्रहीत होकर मोक्ष की प्राप्ति में सहायक हो सकते हैं। अतः ज्ञानी मनुष्य को पूर्ण विद्या से युक्त होकर निष्काम कर्मों अर्थात् दूसरों की सेवा व परोपकार आदि के अधिक से अधिक कार्य करने चाहिये।

इसके लिए वेदों व वैदिक साहित्य का अध्ययन कर वेद विहित कर्मों का आचरण करने के साथ श्री राम, श्री कृष्ण, आचार्य चाणक्य और महर्षि दयानन्द जी आदि महापुरुषों के जीवन चरित्र का भी अध्ययन कर जिज्ञासु मनुष्य अपना कर्तव्य निर्धारित कर सकते हैं। जो ऐसा करते हैं वह मोक्ष की ओर अग्रसर होते हैं और जो सकाम अच्छे शुभ कर्म करते हैं वह जीवन उन्नति करते हुए सुख भोगने के साथ मृत्यु के बाद भी मनुष्य जन्म पाते हैं। इसके विपरीत अविद्यायुक्त जीवन व्यतीत करने व अशुभ कर्म करने वालों की उन्नति न होकर अवनति व पतन ही होता है जिसका परिणाम जन्म-जन्मान्तरों में दुःख का मिलना ही होता है। अतः मनुष्य को विद्या प्राप्ति में सजग रहकर शुभ कर्मों का ही आश्रय लेना चाहिये। विद्या प्राप्ति के लिए जहाँ हमें वेद विद्या व विज्ञान के आचार्यों वा गुरुओं से विधिवत् शिक्षा प्राप्त करनी चाहिये वहीं विद्या से युक्त वेद, उपनिषद्, दर्शन, विशुद्ध मनुस्मृति, सत्यार्थप्रकाश, ऋग्वेदादिभाष्यभूमिका तथा संस्कार विधि सहित आर्याभिविनय, व्यवहारभानु, पंचमहायज्ञविधि आदि ग्रन्थों का अध्ययन भी करना चाहिये।

ईश्वर का यह स्वभाव है कि वह न्यायाधीश के समान किसी जीवात्मा के अच्छे कर्मों के लिए पारितोषिक देने व बुरे कर्म करने वालों को दण्ड देने में किंचित भी रियायत नहीं करता। यदि वह किसी के पाप कर्मों को क्षमा करेगा तो उसकी न्याय व्यवस्था समाप्त हो जायेगी और फिर विश्व में सर्वत्र अव्यवस्था ही रहेगी। ईश्वर शुभ कर्म करने वालों की ही उन्नति करता है। वह ईश्वरोपासना, यज्ञों का अनुष्ठान, माता-पिता-आचार्यों-अतिथियों की सेवा सहित सभी पशुओं व इतर योनियों के प्राणियों को मित्र के समान देखने वालों व वेदों के स्वाध्याय, सदाचरण व योगाभ्यास में निरत रहने वालों को मोक्ष प्राप्त कराकर जन्म व मरण के बन्धन से मुक्त कर सुदीर्घकाल तक उन्हें सुख व आनन्द का लाभ कराता है। जो लोग अविद्या आदि के कारण आत्म-हनन के कार्य करते हैं वह अवनति को प्राप्त होकर दुःख ही भोगते हैं। ऐसे लोगों व जीवात्माओं के प्रति ईश्वर की सहानुभूति होती है। वह उन्हें शुभ कर्मों में प्रवृत्त होने की प्रेरणा करते हैं। ईश्वर की कृपादृष्टि उन पर कभी बन्द नहीं होती। ऐसे मनुष्यों के जो अच्छे कार्य होते हैं उनसे उन्हें सुख मिलता है ओर जो अच्छे कार्य न होकर अशुभ कर्म होते हैं, उनका दण्ड रूपी फल उन्हें जन्म-जन्मान्तर में मिलता है। कई लोग बुरे काम करते हैं और पकड़े नहीं जाते तो वह समझते हैं कि वह ईश्वर के दण्ड से बच जायेंगे। ऐसे लोग भारी अविद्या से ग्रस्त होते हैं। उनका सोचना व विचार उचित नहीं है। उन्हें समाज में उन लोगों को देखना चाहिये जो अनेकानेक दुःखों से ग्रस्त हैं जिनका कारण उन दुःखी लोगों को ज्ञात नहीं होता। इसका कारण उनके पूर्व समय व पूर्वजन्म के कर्म ही प्रायः हुआ करते हैं। अतः ऐसे लोगों को देख कर शिक्षा लेनी चाहिये और किसी अशुभ कर्म को करने का विचार भी नहीं करना चाहिये भले ही उसकी कितनी भी क्षति होती हो। इसका कारण यह है कि उसे अपने उस किये जाने वाले कर्म का फल भविष्य में अवश्य ही भोगना होगा, वह उससे बच नहीं सकता।

सृष्टि में अनन्त संख्या में जीवात्मायें हैं। ईश्वर उन सभी को उनके पूर्वजन्मों के कर्मों के आधार पर जाति, आयु और भोग देता है। जाति का अभिप्राय मनुष्य, पशु, पक्षी आदि जातियों से हैं। जीवात्मा जिस किसी योनि में जन्म ले, उस योनि के अनुसार कुछ काल बाद आयु पूर्ण होने पर उसकी मृत्यु होती है। अशुभ कर्म भोग लेने पर फिर मनुष्ययोनि में आकर उन्नति करने का अवसर मिलता है। मनुष्य को इस अवसर को गवाना नहीं चाहिये। संसार में देखने में आ रहा है कि परमात्मा ने सब जीवों को अनेकानेक योनियों में जन्म

दिया हुआ है और वहाँ उनका भलीभाँति पालन हो रहा है। यह क्रम ऐसे ही चलता रहेगा। इसका आदि नहीं है और न ही अन्त। हाँ, बीच में रात्रि रूप में प्रलय अवश्य आती है। प्रलय के बाद ईश्वर पुनः सृष्टि करता है जिसके बाद जीवात्माओं को कर्मानुसार जन्म मिलना आरम्भ हो जाता है। इस लेख में की गई चर्चा से यह सिद्ध होता है कि ईश्वर सभी जीवों को आवागमन के सिद्धान्त के अनुसार भिन्न-भिन्न योनियों में बार-बार जन्म देकर सुधार के अवसर देता रहता है और जो जीवात्मायें अपना सुधार कर व विद्यावान होकर पुरुषार्थ और वेदविहित शुभ कर्मों को करती हैं, उनकी उन्नति होकर उन्हें मोक्ष अर्थात् जन्म-मरण से अवकाश तथा आनन्द की प्राप्ति होती है। मोक्ष प्राप्ति विषयक तर्क व युक्तियों को अधिक विस्तार से जानने के लिए जिज्ञासु बन्धुओं को सांख्य दर्शन का अध्ययन करना चाहिये। अन्य दर्शनों का भी अध्ययन करने पर उन्हें वेदों का अभिप्राय तर्क व युक्तियों के आधार पर ज्ञात हो सकेगा जैसा कि विज्ञान में विषयों का निरुपण होता है। मोक्ष के विषय में ऋषि दयानन्द ने सत्यार्थप्रकाश ग्रन्थ के नवम समुल्लास में विस्तार से लिखा है। इसका अध्ययन भी हमें करना चाहिये। इससे असत्कर्मों के त्याग तथा सत्कर्मों के आचरण सहित विद्या प्राप्ति की प्रेरणा प्राप्त होती है।

हम सभी को सच्चिदानन्दस्वरूप, सर्वशक्तिमान, सर्वज्ञ, सर्वद्रष्टा, सर्वव्यापक, अखण्ड, सर्वत्र एकरस एवं सर्वान्तर्यामी ईश्वर व उसकी व्यवस्था में दृढ़ विश्वास रखना चाहिये। हमारा यह जीवन ईश्वर ने हमें दिया है। हमें प्रयास करना चाहिये कि हम वेदोक्त ईश्वरोपासना, यज्ञ आदि शुभ कर्मों को करके अपनी आत्मा की उन्नति करें जिससे परजन्मों में भी उन्नति होकर सुख प्राप्त होने के साथ हम मोक्ष मार्ग पर अग्रसर रहें वा उसे प्राप्त कर लें। जब तक हमारा मोक्ष नहीं होगा, ईश्वर हमारा साथ नहीं छोड़ेगा और मोक्ष व उसके बाद भी वह सदा हमारे साथ रहेगा। वह एक सच्चे मित्र, माता-पिता-आचार्य-बन्धु के समान हमारे साथ रहेगा और हमें सद्कर्मों को करने की प्रेरणा देता रहेगा। यह वैदिक सिद्धान्त है कि ईश्वर अनन्तकाल तक हमें आवागमन व मोक्ष में रखकर हमें अपने-अपने ज्ञान व कर्मों के सुधार के अवसर देता रहेगा जिससे हम दुःखों से बच सकते हैं और सुख व आनन्द को प्राप्त हो सकते हैं। ऐसे अपने परम हितैषी ईश्वर को हम नमन करते हैं।

- मनमोहन कुमार आर्य
१९६, चुक्खूवाला-२, देहरादून-२४८००१
चलभाष- ९४१२९८५१२१

संरक्षक मण्डल - सत्यार्थ सौरभ (₹११,०००)

श्री रतिराम शर्मा, श्री रामेश्वर दयालु गुप्त; गाजियाबाद, श्रीमान् आनन्द कुमार आर्य, श्री सुरेश चन्द्र आर्य, श्री दीनदयाल गुप्त, स्वामी (डॉ.) ओमानन्द सरस्वती, श्री बी. एल. अग्रवाल, श्री भवानी दास आर्य, श्री मिठाईलाल सिंह, श्री चन्दूलाल अग्रवाल, श्री कै. देवरत्न आर्य, श्री नारायण लाल मित्तल, श्रीमती आभा आर्या, श्रीमती शारदा गुप्ता, श्रीमती पुष्पा गुप्ता, स्वामी (डॉ.) आर्येशानन्द सरस्वती, श्री सुधाकर पीयूष, आर्यसमाज गाँधीधाम, आर्य परिवार संस्था कोटा, श्री राजकुमार गुप्ता एवं सरला गुप्ता, प्रो. आई. जे. भाटिया; नासिक, श्री श्रवण कुमार गुप्ता, श्रीमती ओमप्रकाश वर्मा; जयपुर, श्री कृष्ण चौपड़ा, श्री दीपचन्द आर्य; बिजनौर, श्री खुशहालचन्द आर्य, गुप्तदान उदयपुर, श्री राव हरिश्चन्द्र आर्य, श्री लक्ष्मण सराफ, श्री मोती लाल आर्य, श्री रघुनाथ मित्तल, श्री जयदेव आर्य, स्वामी प्रवासानन्द सरस्वती, श्री नरेश कुमार राणा, स्वामी प्रणवानन्द सरस्वती, श्री वीरेन्द्र मित्तल, श्री विजय तायलिया, गुप्त दान दिल्ली, प्रो. आर.के.एरन, श्री एम. विजेन्द्र कुमार टॉक, श्री विकास गुप्ता, श्री भारतभूषण गुप्ता, डॉ. मोतीलाल शर्मा, डी.ए.वी. एकेडमी, टाण्डा, मिश्रीलाल आर्य कन्या इण्टर कॉलेज, टाण्डा, श्री एम.पी. सिंह, श्री रामप्रकाश छाबड़ा, श्री प्रधान जी, मध्यभारतीय आ. प्र. सभा, श्री विवेक बंसल, श्रीमती गायत्री पंवार, डॉ. अमृतलाल तापड़िया, श्री लोकेश चन्द्र टांक, आर्य समाज हिरणमगरी, उदयपुर, श्री प्रह्लादकृष्ण एवं श्रीमती प्रभा भार्गव, डॉ. वेद प्रकाश गुप्ता, श्री वीरसेन मुखी, श्री सुरेशपाल, यू.एस.ए., श्री राजेन्द्र कुमार सक्सेना, कोटा, श्रीमती सुमन सूद, कन्डा घाट (सोलन), माता शीला सेठी, न्यूजर्सी, डॉ. एस. के. माहेश्वरी, उदयपुर, श्री राजेश तिवारी (शिक्षक), ग्वालियर, डॉ. पूर्णसिंह डबास, नई दिल्ली, श्रीमती सविता सेठी, चण्डीगढ़, श्री बृज वधवा, अम्बाला शहर, श्री हजारी लाल आर्य, उदयपुर, डॉ. सत्यप्रकाश, हरदोई, श्री राजेन्द्रपाल वर्मा, वडोदरा, प्रिन्सीपल डी. ए. वी. एच. जेड. एल. सी. सै. स्कूल, दरीबा (राजसमन्द), आचार्य आनन्द पुरुषार्थी, होशंगाबाद, श्री ओ३म् प्रकाश अग्रवाल, नोएडा, श्री भरत ओ३म् प्रकाश अग्रवाल, अहमदाबाद, श्री सुरेन्द्र कर्मचन्दानी, पुणे, डॉ. आनन्द कुमार शर्मा; नई दिल्ली, श्री रमेश चन्द्र गुप्ता, यू.एस.ए., श्री शुद्धबोध शर्मा; श्रीगंगानगर, श्री कन्हैया लाल आर्य, शाहपुरा, डॉ. सत्या पी. वार्ष्णेय; कनाडा, श्री अशोक कुमार वार्ष्णेय; बडोदरा, श्री नागेन्द्र प्रसाद गुप्ता, बगहा (बिहार), श्री गणेशदत्त गोयल, बुलन्दशहर (उ. प्र.), श्री पूर्णचन्द आर्य, कानोड़, श्री वेदप्रकाश आर्य; नई दिल्ली, श्री सत्यनारायण शर्मा; उदयपुर, श्रीमती राधा देवी-रतन लाल राजोरा; निम्बाहेड़ा, श्री सत्यप्रकाश शर्मा; उदयपुर, सुदर्शन कपूर; पंचकूला, श्री देवराज सिंह; उदयपुर, श्रीमती ललिता मेहरा; उदयपुर, श्री कृष्ण लाल डंग आर्य; हिमाचल प्रदेश, श्री जी. राजेश्वर (गौड़) आर्य; हैदराबाद, पुरुषोत्तम लाल मेघवाल; उदयपुर, श्री बलराम जी चौहान; उदयपुर, श्री राकेश जैन; उदयपुर, श्री अम्बालाल सनाढ्य; उदयपुर, श्री भँवर लाल आर्य; उदयपुर

गुड़ और घी है गुणकारी

गुड़ और घी का काम्बिनेशन सुपरफूड की तरह काम करता है। आयुर्वेद के अनुसार गुड़ और घी को साथ में लेने से कई तरह की स्वास्थ्य समस्याएँ दूर होती हैं। गुड़ और घी का मिश्रण इम्यूनिटी बढ़ाने, हड्डियों को मजबूत बनाने में मदद करता है। इससे खून की कमी भी दूर होती है। सर्दियों में गुड़ और घी खाना अधिक लाभदायक माना जाता है। इसे खाने से आप हमेशा फिट और स्वस्थ रह सकते हैं। आयुर्वेदाचार्य श्रेय शर्मा से विस्तार से जानें गुड़ और घी खाने के फायदे

गुड़ में मौजूद पोषक तत्व

गुड़ में आयरन, कैल्शियम, मैग्नीशियम, पोटैशियम, मैंगनीज, जिंक और सेलेनियम काफी अधिक मात्रा में पाया जाता है।

घी में मौजूद पोषक तत्व

घी विटामिन ए, विटामिन ई और विटामिन डी से समृद्ध होता है। इसके अलावा इसमें फैटी एसिड भी पाया जाता है। आयुर्वेद में गाय के देसी घी को सबसे श्रेष्ठ माना गया है।

गुड़ और घी खाने के फायदे

१. हड्डियाँ मजबूत बनाए

गुड़ और घी को साथ में खाने से हड्डियाँ मजबूत होती हैं। गुड़ में कैल्शियम होता है। वहीं घी में विटामिन के२ होता है, जो हड्डियों में कैल्शियम को अवशोषित करने में मदद करता है। इससे हड्डियाँ मजबूत बनती हैं। शारीरिक कमजोरी को दूर करने के लिए भी इस काम्बिनेशन का उपयोग किया जा सकता है। गुड़ और घी खाने से हड्डियों और जोड़ों में दर्द की समस्या नहीं होती है। यह हड्डियाँ मजबूत बनाने का आसान उपाय है।

२. पेट के लिए फायदेमन्द

गुड़ और घी साथ में लेने से कब्ज की समस्या दूर होती है। गुड़ और घी मल त्याग को आसान बनाता है और कब्ज से राहत दिलाता है। पीरियड्स के दर्द से राहत पाने के लिए भी गुड़ और घी का सेवन किया जा सकता है। इससे एसिडिटी में भी आराम मिलता है।

३. खून साफ करे

गुड़ को एक अच्छा ब्लड डिटाक्सीफायर भी कहा जाता है। इसलिए इसे त्वचा के लिए अच्छा माना जाता है। गुड़ और घी साथ में लेने से त्वचा हेल्दी बनती है। इससे शरीर में मौजूद टाक्सिंस आसानी से निकल जाते हैं, त्वचा में निखार आता है।

४. मूड ठीक करे गुड़

गुड़ और घी साथ में लेने से मूड भी ठीक होता है। इसे खाने से स्ट्रेस, तनाव और टेंशन दूर होती है। आप चाहें तो स्ट्रेस फ्री होने के लिए गुड़ और घी का सेवन कर सकते हैं। यह मूड स्विंग को भी ठीक करता है।

५. एनीमिया से राहत

एनीमिया यानी शरीर में खून की कमी। गुड़ में आयरन होता है, इसलिए यह खून की कमी को दूर करता है। एनीमिया से पीड़ित महिलाओं को गुड़ और घी का साथ में सेवन जरूर करना चाहिए। इससे शरीर में खून की पूर्ति होगी।

– श्रेय शर्मा
आयुर्वेदाचार्य

बच्चों की संगति माता का निर्देश

कथा सरित

बच्चों के हृदय पर संगति का प्रभाव शीघ्र अंकित हो जाता है। उसमें अच्छी या बुरी संगति के गुण जल्दी ही परिवर्तन ला देते हैं। यह तो माता पिता और आचार्य पर निर्भर करता है कि वे बच्चों को किस मार्ग की ओर प्रेरित करते हैं।

एक परिवार में माँ-बेटा दो ही सदस्य थे। इकलौता बेटा होने के कारण माँ का वह कुछ अधिक ही लाड़ला बेटा था। वह उसकी अच्छी बुरी जायज-नाजायज सभी आवश्यकताएँ पूरी करती। बच्चे ने जो भी माँग रखी, माँ ने मोहवश पूरी कर दी। कभी यह न सोचा कि उससे बच्चों पर क्या प्रभाव पड़ेगा?

बच्चा स्कूल जाने लगा। एक दिन उसने एक लड़के का बहुत सुन्दर पेन देखा। उसे बहुत पसन्द आया। मौका पाकर उसने बस्ते से निकाल लिया। घर आया। माँ ने देखा पर कुछ कहा नहीं। अगले दिन दूसरे विद्यार्थी की पैंसिल ले आया। माँ ने देख कर भी इसकी ओर कोई ध्यान नहीं दिया। एक दिन मौका पाकर वह पुस्तक ले आया। घर उलाहना भी आया। परन्तु माँ ने कहा- 'मेरा बेटा ऐसा कर ही नहीं सकता।' बात रफा-दफा हो गई।

हर हरकतों से, जिन पर कोई प्रतिबन्ध न था, बेटे का हौसला बुलन्द होने लगा। क्योंकि अब कहने वाला कोई नहीं था। माँ तो उसका पक्ष लेती थी।

धीरे-धीरे उसमें जुआ खेलने की आदत पड़ गई। जुआ खेलने के लिए पैसे चाहिए। कभी किसी विद्यार्थी के पैसे चुरा लेता, कभी कुछ घर से उठा लेता। माँ चुप रहती। सोचती बच्चा है कल को सुधर जाएगा। परन्तु सुधार कहाँ से होता। इसके लिए तो उसने कभी प्रयत्न ही नहीं किया था।

आवश्यकता पड़ने पर पड़ोसियों के घर से भी चुराने लगा। शराब की लत ने उसे इसके लिए मजबूर कर दिया था। शराब और जुए के आकर्षण ने उसकी पढ़ाई को भी प्रभावित किया। काम पूरा न होने के कारण क्लास से गायब रहने लगा। धीरे-धीरे पढ़ाई बन्द हो गई। सवेरे बस्ता लेकर जाता और चार बजे वापस आ जाता। माँ ने पढ़ाई के बारे में कभी न पूछा। न स्कूल में, न घर में।

कुछ दिनों के बाद बेटे ने स्कूल जाना ही बन्द कर दिया। सारा दिन आवारागर्दी में ही बिताने लगा। उसे घर के काम से भी कोई मतलब न था। क्योंकि माँ ने इसके लिए कभी प्रेरित नहीं किया था।

इसका फल यह हुआ कि बेटा बड़ी चोरियाँ करने लगा, डाके डालने लगा। अब उसमें आपराधिक प्रवृत्ति ने जन्म ले लिया था। एक बार किसी की हत्या के सिलसिले में पकड़ा गया। जज ने उसे फांसी की सजा दी। जब फांसी का समय निकट आया तो उससे पूछा गया- 'तुम्हारी अन्तिम इच्छा किया है?' उसने उत्तर दिया- 'माँ से मिलना चाहता हूँ।'

माँ आ गई। फांसी की सजा सुन कर उसी आँखों से अश्रुधारा बह निकली। बेटे ने कहा- 'मैंने कान में कुछ कहना चाहता हूँ।' माँ ने कान पास में किया तो बेटे ने उसका कान काट लिया। माँ की चीख निकल गई। लोगों ने पूछा- 'यह क्या किया?' बेटे ने कहा- मेरे फांसी पर चढ़ने का कारण मेरी माँ है। यदि उसने पहले दिन, जब मैं पैन चुरा कर लाया था, रोका होता तो मैं आज इस स्थिति में न पहुँचता। मुझे फांसी के फंदे तक पहुँचाने का कारण मेरी माँ है।'

पता नहीं लाड़-प्यार में कितने ही माता-पिता बच्चों के पतन का कारण बन जाते हैं। अतः माता-पिता बच्चों की पूर्ण रूपेण निगरानी रखें कि कहीं मेरी बेटी या मेरा बेटा बुरे बच्चों के साथ तो नहीं रहता, गन्दी आदतें तो नहीं सीख रहा, स्कूल निरन्तर जाता है या नहीं, स्कूल का कार्य करता है या नहीं?

कई बार घर के नौकर भी बच्चे को गलत राह पर ले जाने का कारण बन जाते है। नौकरी पेशा माता-पिता के बच्चे खास कर गलत रास्ते पर चल पड़ते हैं। क्योंकि वे नौकरों के साथ अपना समय अधिक व्यतीत करते हैं। अतः उनकी आदतें सीखेंगे ही। नौकरों के सारे दुर्गुण बच्चों में भी आ जाते हैं। इसलिए ऐसे अभिभावक अवश्य सावधान रहें। कहीं बच्चा उन नौकरों की संगति में तो नहीं रह रहा।

यदि प्रारम्भिक काल में ही बच्चे में अच्छी आदतें आ गईं तो वह सत्पथ पर चलने लगेगा। उसमें अच्छे संस्कार पक्के हो गए तो फिर बुराई का प्रभाव उस पर नहीं पड़ेगा। वह दुर्जनों से मिलने पर भी सज्जनता नहीं छोड़ेगा।

सन्त न छोड़े सन्तई, कोटिक मिले असन्त।
चन्दन विष व्यापत नहीं, लिपटे रहत भुजंग।।

आइए, हम भी अपने बच्चों को सत्संग में ले चले जिससे उन पर अभी से अच्छे संस्कार पड़े और वे समाज के महत्वपूर्ण अंग बन सके।

श्री ईश्वर जी आर्य पानीपत हरियाणा के एक सफल उद्योगपति हैं तथा निष्ठावान आर्य समाजी हैं। आप अपनी दान प्रवृत्ति के चलते समय–समय पर आर्य समाज की विभिन्न संस्थाओं तथा विभिन्न जनों को दान प्रदान करते रहते हैं। कोरोना द्वारा प्रभावित समय में जिन उपदेशकों के परिवार विषम परिस्थितियों को झेल रहे थे, उनमें से अनेक को श्री आर्य ने आर्थिक सहायता संप्रेषित की थी। ऐसे उदार आर्य सज्जन ही आर्य समाज की विभिन्न योजनाओं को गति देने में सहायक सिद्ध होते हैं। न्यास द्वारा जो अर्थ दान की अपील की जा रही है उसे अपने संज्ञान में लेते हुए श्री आर्य ने ₹10,1000 (एक लाख एक हजार) का सात्विक सहयोग न्यास को संप्रेषित किया है, इसके लिए हम अपनी ओर से और न्यास की ओर से उनके प्रति हार्दिक आभार प्रकट करते हैं और आशा करते हैं कि भविष्य में भी उनका इसी प्रकार का सकारात्मक सहयोग न्यास को प्राप्त होता रहेगा। निश्चित रूप से आपके इस सहयोग से न्यास को अपने कार्य में सुनिश्चित गति प्राप्त होगी। पुनः धन्यवाद सहित

– अशोक आर्य, अध्यक्ष–न्यास

पूरा नाम–
चलभाष–

सत्यार्थप्रकाश पहेली- १२/२१

सत्यार्थ सौरभ सदस्य संख्या–

रिक्त स्थान भरिये- सत्यार्थप्रकाश जैसे महान् ग्रन्थ का स्वाध्याय कीजिए। (एकादश समुल्लास पर आधारित)- पुरस्कार प्राप्त करिये

१ ह	१		१ द	१	१ दि		२	२ यों
	३	३ ढ़		४	४	४ वा	४	४ न
५ श	५	५	५ प		६	६ जी	६	६ नी

संकेत (बाएँ से दाएँ) ऊपर से नीचे न भरें।

१. राजा भोज के राज्य में जब व्यास जी के नाम से मार्कण्डेय और शिवपुराण किसी ने बनाया तो उन पण्डितों को राजा भोज ने कौन सा दण्ड दिया था।
२. मूर्ति पूजा किससे प्रारम्भ हुई।
३. राजा भोज के कितने सौ वर्ष के पश्चात् वैष्णव मत का आरम्भ हुआ।
४. यावनाचार्य के चेले का क्या नाम था।
५. वैष्णव मत जो उस समय चला उसको जिस ने चलाया उसका क्या नाम था।
६. राजा भोज ने जो दण्ड दिये वो राजा भोज के बनाए किस ग्रन्थ के इतिहास में लिखा है।

''विस्तृत नियम पृष्ठ १४ पर पढ़ें एवं ₹५१०० पुरस्कार प्राप्त करें।''

कार्यालय में हल की हुई पहेली प्राप्त करने की अन्तिम तिथि- १५ मार्च २०२२

समाचार

'जीवन एक पतंग' विषय पर ऑनलाइन प्रवचन माला का आयोजन

अध्यात्म पथ पत्रिका के सम्पादक आर्यजगत् के प्रसिद्ध वैदिक विद्वान् आचार्य चन्द्रशेखर शास्त्री जी के कुशल संयोजन व संचालन में आज २५७वीं संगोष्ठी विषय- (जीवन एक पतंग) को लेकर हुई।

आचार्य चन्द्रशेखर शास्त्री जी ने ऑनलाइन समारोह को सम्बोधित करते हुए कहा- आदमी जैसा सोचता है वैसा ही बनता है। नकारात्मक सोच आदमी को कमजोर बनाती है। आपको पता होना चाहिए कि निराशावादी के लिए २ अंधेरी रातों के बीच में केवल १ उजला दिन आता है और आशावादी के लिए २ उजले दिनों के बीच केवल १ अंधेरी रात आती है। चार वाक्य जो आदमी की कमजोरी को उजागर करते हैं- १. लोग क्या कहेंगे?, २. मुझसे नहीं होगा, ३.अभी मेरा मूड नहीं है, ४. मेरा तो भाग्य ही खराब है।

कार्यक्रम की मुख्य वक्ता दर्शनाचार्या श्रीमती विमलेश बंसल आर्या उर्फ विमल वैदेही जी ने जीवन एक पतंग विषय को एक सुन्दर रूपक द्वारा व्याख्यायित किया। उन्होंने ईश्वर की वेदवाणी व दर्शन के सूत्रों के आधार पर बहुत ही सारगर्भित ज्ञानवर्धक ओजस्वी व प्रेरक व्याख्यान दिया। उन्होंने कहा जिस तरह पतंग विश्वास और प्रेम की डोर से मुक्त आकाश में उड़कर संतुलन के जोते से सधकर व पुच्छल मुखिया के निर्देशन में सर्वाधार परमात्मा की चरखी द्वारा प्रसन्नता आनन्द को प्राप्त कराती है वैसे ही जीवन को सुरभित व्यवस्थित नियन्त्रित व सहयोगी उपयोगी उद्योगी बनाकर एकमेव लक्ष्य परमानन्द की प्राप्ति का संकल्प लेकर उद्यम कर मुक्त गगन में विचरण करना ही होगा, उसके लिए हृदयाकाश में स्थित उस असीम अनन्त महान् ईश्वर को देखने स्वयम् में स्थित होना ही होगा। स्वयं से प्रेम, विश्वास, ईश्वर से प्रेम विश्वास की डोरी को दृढ़ करना ही होगा।

- संवाददाता , अध्यात्म पथ

न्यास द्वारा अमर हुतात्मा स्वामी श्रद्धानन्द बलिदान दिवस का आयोजन

दिनांक २५ दिसम्बर २०२१ को न्यास परिसर में अमर हुतात्मा स्वामी श्रद्धानन्द जी महाराज के बलिदान दिवस का आयोजन किया गया। इस अवसर पर नवनिर्मित सुरेश चन्द्र दीनदयाल आर्य चल चित्रालय में स्वामी श्रद्धानन्द जी के जीवन पर विचार टीवी द्वारा निर्मित फिल्म आह्वन का प्रदर्शन किया गया। यज्ञ के पश्चात् माता लीलावन्ती सभागार में आयोजित सभा में न्यास के अध्यक्ष अशोक आर्य द्वारा स्वामी श्रद्धानन्द जी के जीवन पर प्रकाश डाला गया। इस अवसर पर सभा की अध्यक्षता श्री कुलदीप माथुर ने की तथा उदयपुर क्रिकेट से जुड़े हुए नव युवाओं को प्रेरित करते हुए अम्बेडकर खेल संघ की ओर से उन्हें ट्रॉफी प्रदान की गई।

- भँवर लाल गर्ग, व्यवस्थापक-न्यास

'आयुर्वेद से ओमिक्रोन से बचाव' पर गोष्ठी सम्पन्न

वीरवार २० जनवरी २०२२, केन्द्रीय आर्य युवक परिषद् के तत्वावधान में 'आयुर्वेद से ओमिक्रोन से बचाव' विषय पर ऑनलाइन गोष्ठी का आयोजन किया गया । यह कोरोना काल में ३४०वाँ वेबिनार था ।

मुख्य वक्ता डॉ. मंजूषा राजगोपाला (विभागाध्यक्ष, अखिल भारतीय आयुर्वेद संस्थान,नई दिल्ली) ने कहा कि यदि हमारी रोग प्रतिरोधक क्षमता मजबूत होगी तो ओमिक्रोन से मुकाबला किया जा सकता है। अनेको वॉयरस आते है लेकिन इम्युनिटी यदि सक्षम है तो व्यक्ति को प्रभावित नहीं कर सकते है। उन्होंने कहा कि नाक में सुबह-शाम दो बार सरसो या अणु तेल डालें, गर्म पानी के गरारे, जीरा या अदरक उबाल कर गर्म पानी ही पिये तो ओमिक्रोन से बचाव हो सकता है। साथ ही हल्का पाचक भोजन करें उससे स्वस्थ रहने में सहायता मिलती है। योग व सूक्ष्म व्यायाम भी इम्युनिटी बढ़ाएगा।

- प्रवीन आर्य, मीडिया प्रभारी

नहीं रहीं माता शिवराजवती जी

श्री महर्षि दयानन्द स्मारक ट्रस्ट टंकारा, गुजरात की वरिष्ठ ट्रस्टी एवं उप-प्रधान माता शिवराजवती मानकटाला आर्या का देहावसान हो गया है। उन्होंने ही 'तुने हमें उत्पन्न किया, पालन कर रहा है तु' को सर्वप्रथम संगीतमय स्वरबद्ध कर रिकार्ड करवाया था। न्यास एवं सत्यार्थ सौरभ परिवार परमपिता से प्रार्थना करता है कि वह दिवंगत आत्मा को अपनी ममतामयी गोद में स्थान प्रदान करे एवं परिवारीजनों को इस दुःख को सहन करने की शक्ति व सामर्थ्य दे।

- भवानीदास आर्य, मंत्री-न्यास

न्यास के सतत् सहयोगी श्री कमला शंकर जी के पिता श्री जमना लाल जी नागदा का ९५ वर्ष की आयु में दिनांक ११ जनवरी २०२२ को निधन हो गया। श्री नागदा अपने पीछे स्वयं के द्वारा संस्कारित किए हुए भरे पूरे परिवार को छोड़कर इस असार संसार से विदा हुए हैं। इस वियोगजन्य दुःख की घड़ी में न्यास तथा सत्यार्थ सौरभ परिवार नागदा परिवार के साथ है। हम परमपिता परमात्मा से प्रार्थना करते हैं कि वह दिवंगत आत्मा को अपनी आनन्दमयी गोद में स्थान प्रदान करें एवं परिवारीजनों को इस दुःख को सहन करने की शक्ति व सामर्थ्य दें।

- नारायण मित्तल, कोषाध्यक्ष-न्यास

अमर हुतात्मा स्वामी श्रद्धानन्द बलिदान दिवस पर संगोष्ठी

आर्य समाज, हिरण मगरी, उदयपुर की ओर से स्वतंत्रता सेनानी, गुरुकुल कांगड़ी के संस्थापक स्वामी श्रद्धानन्द जी के ९५वें बलिदान दिवस पर संगोष्ठी का आयोजन किया गया। इस अवसर वैदिक विद्वान् श्री इन्द्र प्रकाश यादव ने कहा कि स्वामी श्रद्धानन्द जी देश की स्वतंत्रता आन्दोलन में अनुपम योगदान देने वाले, दलितों के हितों की रक्षा के लिए सदैव तत्पर रहते थे। लार्ड मैकाले की शिक्षा के स्थान पर गुरुकुल पद्धति में शिक्षा हेतु गुरुकुल कांगड़ी की स्थापना की।

कार्यक्रम के अध्यक्ष डॉ. अमृत लाल तापड़िया ने कहा कि स्वाधीनता संग्राम के अमर सेनानी, हिन्दू मुस्लिम एकता के प्रणेता, दलितों के मसीहा तथा नारी जाति के मुक्ति दाता अमर शहीद स्वामी श्रद्धानन्द का व्यक्तित्व प्रकाश स्तम्भ बनकर भावी पीढ़ी का अनन्त काल तक मार्ग प्रशस्त करता रहेगा।

सर्वश्री वेद मित्र जी शास्त्री, सुरेश साहनी (जयपुर) ने भी विचार व्यक्त किये। श्रीमती ललिता मेहरा, श्रीमती चन्द्रकला यादव, श्रीमती नूतन गर्ग, कृष्ण कुमार सोनी, पंकज गर्ग, देवराज सिंह, रामदयाल आदि उपस्थित थे।

- भंवर लाल आर्य, प्रधान

हलचल

संस्कृत भाषा में निर्णय पारित कर मण्डलायुक्त ने रच दिया इतिहास

मण्डलायुक्त, झाँसी के न्यायालय में आज देववाणी संस्कृत भाषा गुंजायमान हो गयी। मण्डलायुक्त डॉ. अजय शंकर पाण्डेय ने आज ०२ निर्णय संस्कृत भाषा में लिखकर जारी किये। राजस्व न्यायालय के इतिहास में संस्कृत भाषा में यह पहली बार जजमेन्ट लिखा गया है। सरकारी कामकाज और न्यायालयों की भाषा उत्तर प्रदेश में हिन्दी के रूप में मान्य है परन्तु मण्डलायुक्त डॉ. अजय शंकर पाण्डेय ने भारत की सभी भाषाओं की जननी संस्कृत भाषा में निर्णय पारित करके इतिहास रच दिया है।

मण्डलायुक्त के न्यायालय में वाद संख्या-१२६६/२०२१ छक्कीलाल बनाम राजाराम आदि, अन्तर्गत धारा-२०७ अधिनियम, उ.प्र. राजस्व संहिता-२००६ दिनांक ३०-१२-२०२१ में दर्ज हुआ। दोनों पक्षों की बहस सुनने के बाद उभयपक्षों को साक्ष्य व सुनवाई का समुचित अवसर देते हुये संस्कृत भाषा मे दो पृष्ठ का निर्णय पारित किया गया। संस्कृत भाषा में पारित निणर्य में यह लिखा गया है-

'अतः अपीलस्य (प्रत्यावेदनस्य) ग्राहयता स्तरे एवं अवर न्यायालयेन २०-१०-२०२१ इति दिनांके निगर्तम् आदेशं निरस्तीकृत्य प्रकरणमिदम् एतेन निर्देशेन सह प्रतिप्रेषितम् क्रियते यद् अपीलकर्ता २६-०१-२०२० इति दिनांके प्रस्तुते रिस्टोरेशन प्राथर्ना-पत्र विषये उभयोः पक्षयोः पुनः श्रवणाम् अवसरं विधाय गुणदोषयोश्च विचार्य एकमासाभ्यन्तरम् निस्तारणं करणीयम् वाद प्रतिवाद पत्रावली च कायार्लये सुरक्षिता करणीया।'

इसी प्रकार मण्डलायुक्त के न्यायालय में शस्त्र लाईसेंस से सम्बन्धित वाद संख्या-१२६६/२०२१ रहीश प्रसाद यादव बनाम राज्य सरकार उ.प्र. अन्तगर्त धारा-१८ भारतीय शस्त्र अधिनियम, १६५६ दिनांक १८-१२-२०२१ में दर्ज हुआ। दोनों पक्षों की बहस सुनने के बाद उभयपक्षों को साक्ष्य व सुनवाई का समुचित अवसर देते हुये संस्कृत भाषा मे दो पृष्ठ का निर्णय पारित किया गया।

कमिश्नरी, झाँसी के अभिलेखागार में कार्यरत अभिलेखपाल दिलीप कुमार द्वारा पुराने रिकार्डस की छानबीन करके बताया गया कि ब्रिटिश काल से झाँसी कमिश्नरी सन् १६११ से चल रही है। अभिलेखीय आधार पर संस्कृत भाषा में पारित किये गये उपरोक्त दोनों निणर्य एक मात्र हैं। इसके पहले संस्कृत भाषा में निर्णय पारित करने का कोई दृष्टान्त उपलब्ध नहीं है।

मण्डलायुक्त के पेशकार प्रमोद तिवारी द्वारा बताया गया कि उपरोक्त दोनों निणर्य संस्कृत भाषा में लिखे गये हैं। संस्कृत भाषा सभी की समझ में नहीं आयेगी इसलिये मण्डलायुक्त डॉ. पाण्डेय द्वारा इसके साथ ही इसका अनुवाद हिन्दी में कराकर पत्रावली पर रखने हेतु निदेर्शित किया गया। यह भी ज्ञातव्य है कि डॉ. पाण्डेय अपने कमरे की स्वयं सफाई करने के कारण भी चर्चा में बने थे।

जयतु संस्कृतम् जयतु भारतम्

मकर संक्रान्ति पर्व पर विशेष यज्ञ

आर्य समाज हिरण मगरी, उदयपुर की ओर से १४ जनवरी २०२२ को मकर संक्रान्ति पर्व पर विशेष यज्ञ का आयोजन किया गया। पं. राम दयाल के पौराहित्य में सम्पन्न यज्ञ के मुख्य यजमान कृष्ण कुमार सोनी, डॉ. अमृत लाल तापड़िया थे। वैदिक विद्वान् श्री इन्द्र प्रकाश यादव ने पर्व के महत्व पर प्रकाश डालते हुए कहा कि दो ऋतुओं, दो काल के मिलन को पर्व कहते हैं। यह पर्व दो ऋतु को ही नहीं दो संक्रान्तियों को भी जोड़ता है। तिल और तिल के पदार्थ खाना स्वास्थ्य के लिए लाभकारी है वहीं आज के अवसर पर दान का विशेष महत्व है।

इस अवसर पर सर्वश्री वेदमित्र, रामनिवास गदिया, भँवर लाल आर्य, श्रीमती चन्द्रकला आर्य, श्रीमती चन्द्रकान्ता यादव ने पर्व की विशेष आहुतियाँ प्रदान की।

- भँवर लाल आर्य, प्रधान

निर्भीक भजनोपदेशक भजनलाल आर्य का निधन

आर्य समाज के तार्किक व निर्भीक भजनोपदेशक ६५ वर्षीय भजन लाल आर्य का भौतिक शरीर पंचतत्व में विलीन हो गया। वैदिक विधान से उनके पैतृक गाँव मितरोल में उनकी अन्त्येष्टि की गई। आचार्य तरुण कुमार की देखरेख में गुरुकुल गौतम नगर के विद्यार्थियों ने वैदिक मंत्रों का पाठ किया। भजनलाल आर्य ने आजीवन वैदिक धर्म का प्रचार किया धार्मिक पाखण्ड, सामाजिक कुरीतियाँ, राजनैतिक भ्रष्टाचार, नशाखोरी आदि बुराइयों के खिलाफ जोरदार अभियान चलाया। भजन लाल आर्य तत्ववेत्ता व विद्वान् थे। उनके निधन से आर्य समाज की अपूरणीय क्षति हुई है। उन्होंने अपना सम्पूर्ण जीवन आर्य समाज को समर्पित कर दिया था। वह गाँव के सरपंच भी रहे। न्यास एवं सत्यार्थ सौरभ परिवार की ओर से हार्दिक श्रद्धांजलि एवं परमपिता परमात्मा के श्री चरणों में करबद्ध निवेदन है कि वह दिवंगत आत्मा को अपनी ममतामयी गोद में स्थान प्रदान करे।

सत्यार्थ प्रकाश पहेली - ०९/२१ के विजेता

सत्यार्थ प्रकाश पहेली- ०९/२१ के चयनित विजेताओं के नाम इस प्रकार हैं- श्री पुरुषोत्तम मेघवाल; उदयपुर (राज.), श्रीमती सुनिता सोनी; बीकानेर (राज.), श्रीमती रूपा देवी सोनी; बीकानेर (राज.), श्री प्रधान जी आर्यसमाज; बीकानेर (राज.), श्रीमती उषा देवी सोनी; बीकानेर (राज.), श्रीमती महेश चन्द्र सोनी; बीकानेर (राज.), श्री हर्षवर्द्धन आर्य; नेमदारगंज (बिहार), श्री विनोद प्रकाश गुप्त; सैनिक विहार (दिल्ली), श्रीमती कंचन देवी; बीकानेर (राज.), श्रीमती संतोष चावला; गाजीपुर (दिल्ली), श्री फूलचन्द यादव; गाजियाबाद (उ.प्र.), डॉ. राजबाला कादियान; करनाल (हरि.), श्री गोपाल लाल राव; चित्तौड़गढ़ (राज.)।

सत्यार्थ सौरभ के उपर्युक्त सभी सुधी पाठकों को हार्दिक बधाई।

ध्यातव्य- पहेली के नियम पृष्ठ 14 पर अवश्य पढ़ें।

वेद ज्ञान की आवश्यकता

महर्षि दयानन्द स्पष्ट रूप से वेद को ईश्वरीय ज्ञान मानते हैं। भारतीय परम्परा में घोषित रूप से यही मान्यता विद्यमान रही है। यहाँ प्रश्न उठता है कि कुछ अन्य ग्रन्थों विशेष रूप से बाइबल तथा कुरान को भी ईश्वर प्रदत्त ही माना जाता है फिर क्या कारण है कि वेद को ही ईश्वरीय ज्ञान माना जावे कुरान तथा बाइबिल को नहीं? अतः हमें उपयुक्त प्रतीत होता है कि इस स्थल पर अति संक्षेप में बाइबल तथा कुरान को उपरोक्त कसौटियों पर कसते हुए कुछ उदाहरण प्रस्तुत किए जावें जिससे सुधी पाठकों को निश्चय हो जावे कि ये ग्रन्थ ईश्वरीय ज्ञान नहीं हो सकते।

(१) ईश्वर दयालु है– यह बात सर्व स्वीकार्य होनी ही चाहिए। ईश्वर के समक्ष प्राणिमात्र बराबर हैं। वह किसी एक के सुख के लिए दूसरे को दुःख देने का आदेश नहीं दे सकता। वेद में पदे पदे ऐसे निर्देश विद्यमान् हैं कि प्राणीमात्र को मित्रवत् देखा जावे। किसी की हिंसा स्वार्थ से न की जावे। कतिपय उदाहरण दृष्टव्य हैं।

पशूँस्त्रायेथाꣳ। (यजु ६/११)– पशुओं की रक्षा करो।

पशून् पाहि। (यजु १/१)– पशुओं की रक्षा करो।

मित्रस्याहं चक्षुषा सर्वाणि भूतानि समीक्षे। मित्रस्य चक्षुषा समीक्षामहे। (यजु. ३६/१८) अर्थात् मैं सभी प्राणियों को मित्र दृष्टि से देखूँ। सब मुझे मित्र दृष्टि से देखें।

प्रियं मा कृणु देवेषु, प्रियं राजसु मा कृणु। प्रियं सर्वस्य पश्यत उत शूद्र उतार्ये। (अथर्व. १९/६२/१) अर्थात् हम सभी वर्णों के प्रिय बनें।

मा गामनाराममदितिं वधिष्ट।

अर्थात् निष्पाप उपकारक प्राणी की हिंसा मत करो।

देवैर्नो देव्यदितिर्नि पातु देवस्त्राता त्रायतामप्रयुच्छन्।
नहि मित्रस्य वरुणस्य धासिमर्हामसि प्रमियं सान्वग्नेः॥

– ऋग्वेद ४/५५/७

अर्थात् किसी भी मनुष्य को, किसी भी मनुष्य की अथवा (चेतन-जड़) पदार्थ की हिंसा (अथवा बरबादी) और मादक द्रव्यों का सेवन नहीं करना चाहिये। सदा विद्वानों की और माता-पिता की शिक्षा ग्रहण करनी चाहिये।

इस प्रकार वेद में सर्वत्र पशुहिंसा के साथ हिंसा के किसी भी स्वरूप का स्पष्ट निषेध है। यह स्वाभाविक भी है क्योंकि प्रभु दयालु हैं वे किसी भी प्राणी का अनिष्ट नहीं चाह सकते।

ईश्वर सबकी भलाई चाहता है।

ये समानाः समनसो जीवा जीवेषु मामकाः।
तेषाꣳश्रीर्मयि कल्पतामस्मिँल्लोके शतꣳसमाः॥

– यजुर्वेद १९/४६

ईश्वर कहता है कि जो मन से साम्यभाव वाले हैं वही मुझको प्रिय हैं, और उन्हीं की सम्पत्ति (यश व कीर्ति) सैंकड़ों वर्ष तक रहती है।

परन्तु बाइबल-कुरान में यह स्थिति नहीं है। कतिपय उदाहरण दृष्टव्य हैं–

(अ) '.....और उसने मक्खन और दूध और वह बछड़ा जो पकाया था, लिया और उनके आगे धरा और आप उनके पास पेड़ तले खड़ा रहा और उन्होंने खाया।'

(तौरेत पर्व १७/आ७)

(ब) 'और वह उस बैल को परमेश्वर के आगे बलि करे और लोहू को यज्ञवेदी के चारों ओर ....छिड़के।

(तौरेत लैव्य व्यवस्था की पुस्तक प/आ७)

कुरान–

(अ) 'ऐ ईमान वालो! परस्पर थामे रखो और लड़ाई में लगे रहो।' (मं. १/सि४/ सू.३/आ. १८६)

(ब) 'और अपने हाथों को न राकें तो उनको पकड़ लो और जहाँ पाओ मार डालो। (मं. १/सि७/ सू.४/आ. १०)

पाठकगण विचार करें। जिस प्रकार एक पिता अपने सभी पुत्र-पुत्रियों में स्नेहभाव और आत्मीयता की कामना करता है उसी प्रकार प्रभु भी अपनी समस्त प्रजा को हिल मिल कर रहते देखना चाहता हैं। परन्तु उपरोक्त पुस्तकों के उपरोक्त उदाहरणों एवं ऐसे ही अनेकों स्थलों में विपरित आचरण का निर्देश होने से ये ईश्वरोक्त नहीं।

वेद जो कि प्रभु की कल्याणी वाणी है, में प्रभु का निर्देश है–

'अन्यो अन्यमभि हर्यत वत्सं जातमिवाघ्न्या'

(अथर्व. ३/३०/१)

ऐ मनुष्यों! अन्यों से इस प्रकार का प्रेममय व्यवहार करो जैसे गाय सद्यःजात बछड़े से करती है। ईश्वर का उपदेश तो निश्चित रूप से ऐसा ही हो सकता है।

– अशोक आर्य
सत्यार्थ प्रकाश भवन, नवलखा महल, गुलाब बाग

HOT HAI BOSS
Dollar
ULTRA™
THERMALS

RNI Registration No. RAJHIN/2012/47777 February-2021 Postal Registration No. RJ/UD/29-107/2021-2023

जो भूख में नहीं खाते और बिना भूख के भोजन करते हैं, वे दोनों रोगसागर में गोते खा दुःख पाते हैं।

- सत्यार्थ प्रकाश, एकादश समुल्लास पृष्ठ ३४५

स्वत्वाधिकारी, श्रीमद्दयानन्द सत्यार्थप्रकाश न्यास, उदयपुर की ओर से प्रकाशक, मुद्रक अशोक कुमार आर्य द्वारा चौधरी ऑफसेट प्रा. लि., 11/12 गुरुरामदास कॉलोनी, उदयपुर से मुद्रित
प्रेषण कार्यालय- श्रीमद्दयानन्द सत्यार्थप्रकाश न्यास, नवलखा महल, गुलाबबाग, महर्षि दयानन्द मार्ग, उदयपुर-313001 से प्रकाशित, सम्पादक-अशोक कुमार आर्य
मुद्रण दिनांक- प्रत्येक माह की ३ तारीख | प्रेषण दिनांक- प्रत्येक माह की ७ तारीख | प्रेषण कार्यालय- मुख्य डाकघर, चेतक सर्कल, उदयपुर